❀ ॐ ❀

कलौ तद्धरिकीर्तनात्

सार-संग्रह

सं[illegible]—

ब्रह्मीभूत श्री १०८ श्री स्वामी परमानन्द जी महाराज

की प्रेरणा से

कुमारी सूरजदेवी 'प्रभाकर'

श्रीभगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा, रेवाड़ी।

छठा संस्करण] सन् १९६५ [मूल्य १-५० पैसे

सहगान

परम पिता पूरण प्रभु, परमानन्द अपार।
प्रेम स्वरूप पावन परम, ईश्वर सर्वाधार॥
दीन दयालु दयानिधे, दाता परम उदार।
सब देवन के देव हे, दुख दोषन से पार॥
शक्ति ज्ञान आनन्द के, हे पूर्ण भण्डार।
सब से सुन्दर हे हरे, सब सारों के सार॥
तेरी ऐसी हो दया हम में बढे मिलाप।
संघ शक्ति का मान हो मिटे फूट का पाप॥
मीठी माला मेल की, फेरें हम दिन रात।
जो जीवन से एक हों, तजे कलह की बात॥
हम में आवे एकता, भ्रातृपन का भाव।
दिन दिन बल शक्ति बढ़े, धरम करम में चाव॥
हाथ जोड़ हो वन्दना, तुम को बारम्बार।
भक्ति भाव से नम्र हों, मन में श्रद्धाधार॥

वा घर जाय्यो हे नींद	३५	७६
राम ज्यूं राखे त्यूँ रहिये	३६	७६
मोको कहाँ ढूंढेरे बन्दे	३७	७७
हरि हर जप लेनी	३८	७७
नैनों लख लेनी साँई	३९	७७
कान्हा बंशी वारे मोरी गली	४०	७८
कान्हा बंशी वारे उठाना मोरी मटकी	४१	७८
अब ना रहूंगी राम अटकी	४२	७८
जो कोई चित से मोहे ना बिसारे	४३	७९
अरे लोगो तुम्हें क्या है	४४	७९
बने जो कुछ धरम करले	४५	[illegible]
बन आये की बात रे ऊधो	[illegible]	[illegible]
मिलना कठिन है कैसे मिलूं	४७	[illegible]
प्रभु जी भले बुरे हम तेरे	४८	[illegible]
प्रभु तेरी माया लखी न जाय	४९	[illegible]
बांस चढी हरषानी नटनियां	५०	[illegible]
बतादे सखी कौन गली गये श्याम	५१	[illegible]
बम् बम्भोले नाथ आज मेरी	५२	८३
अनुभव स्वरूप निज रूप	५३	८४
कोई पीवो रामरस प्यासा रे	५४	८४
म[illegible]न बिन बावरे तैनें हीरा सा	५५	८४
एक[illegible]ल के प्राण पुकार रहे	५६	८५
युक्त[illegible]ीश तू ही धन धन है	५७	८६
यह उन[illegible]ा शरण में बुलालो मुझे	५८	८७
पूर्णानन्द [illegible]ों के लब पर	५९	८८
कृपासे इन[illegible]खे हैं भगवान	६०	८८
[illegible]म्बोदर दातार	६१	८९

डग मग डोले दीनानाथ	६२	८६
श्री राधेरानी दे डारो बांसरी मोरी	६३	६०
दिलवर पास बसदा ढूंढन किथे जावना	६४	६०
मन ना रंगाये रंगाये जोगी कपरा	६५	६१
राम जन मन रंजन राम	६६	६१
वैराग योग कठिन ऊधो	६७	६२
छबि अपनी दिखाजा मुरारी हमें	६८	६२
शरण प्रभु की आओरे	६६	६३
दयार्द्र हो दयालु दासता	७०	६३
हे प्रभो अशरण शरण	७१	६४
मैं श्याम को ढूँढन निकसी	७२	६५
[illegible] राधे [illegible]	७३	६५
[illegible] बता दो	७४	६६
[illegible]ाओं के वाक्य		६६
[illegible]न साँवल पिया मोरी	७५	११६
[illegible] क्या खबर है	७६	११६
[illegible] तेरे दीदार की आरजू है	७७	११७
[illegible]सरा कौन है जहां तू है	७८	११८
धुन रे धुनियां अपनी धुन	७६	११८
नाहिन रह्यो हिये में ठौर	८०	१२०
दिल का दिल बातें बनाकर	८१	१२[illegible]
छबि दिखलादे कोई	८२	[illegible]
बुत में भी तेरा या रब	८३	[illegible]
कलियर वालिया साँई	८४	
प्रभू मैं शरणागत तेरी	८५	

प्रस्तावना ।

करुणावरुणालय भगवान् को कोटिशः धन्यवाद है जिसकी महती अनुकम्पा से हमें आज इस सर्व जनोपनीत पुस्तक का तृतीय संस्करण प्रकाशित करने का शुभावसर प्राप्त हुवा है। पहले दो संस्करणों में हम इसे यथा क्रम नहीं कर सके थे। तृतीय संस्करण से इस पुस्तक के सब विषयों को यथाक्रम रख कर सर्व प्रकार से रुचिकर बनाने का प्रयत्न किया है। अज्ञानी जीव माया जाल में फंस कर उस परम पिता परमात्मा को विसार देता है जो जनक रूप होकर इस समस्त संसार को प्रकट करता है और और पुनः प्रकटित विश्व का पालन करता है। इस कलिकाल में ऐसे भगवान् के सुपुत्र कहलाने के लिये सब से सरल मार्ग उसकी भक्ति है। नवधा भक्ति में भी कीर्त्तन रूपी भक्ति सर्व श्रेष्ठ है। इसी हेतु भक्त जनों के लाभार्थ श्रीमति सूरज देवी ने जो कि साक्षात् त्याग मूर्ति है कठिन परिश्रम से कबीर, दादू, नानक, रैदास, मीरां आदि पूजनीय महात्माओं की वाणियों का जिनके एक एक शब्द परम श्रद्धा और भक्ति से युक्त हैं और जिनके भक्ति युक्त गाने से जीव का संसार सागर से उद्धार हो सकता है। यह उन महात्माओं की ऐसी पवित्र वाणियों का सार है इसका पूर्णानन्द तो वही प्राप्त कर सकेगें जो श्री सद्गुरु के चरण की कृपासे इनका वार वार मनन व निदिध्यासन करेंगे। अन्तमें

हमारी यही प्रार्थना है कि जो इस पुस्तक को पढ़े उनको श्रीसद्गुरु के चरणों में प्रीति हो और वह भगवान् की भक्ति के अनुरागी होकर भवसागर से तरने के अधिकारी हों।

सम्बत् १९८९ { भूमानन्द ब्रह्मचारी,
श्रीभगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी।

साधारण नियम।

१–मनुष्य का पहिला कर्तव्य है कि सद्गुरु की शरण में आवे और उनकी कृपा सम्पादन करने के लिये शुद्ध चित्त से उनकी सेवा करे।

२–उन सद्गुरु के वचनों पर दृढ़ विश्वास रक्खे।

३–एक ही मत मार्ग का अनुसरण करे।

४–साधु सज्जन का सत्संग करे

५–विषयों के आधीन न हो।

६–शत्रुओं को मित्र बनावे।

७–अधिक उपाधि न बढ़ावे।

८–निरन्तर सारासार का विचार करता रहे।

९–भूत मात्र पर दया रक्खे।

१०–अहर्निश परमात्मा का ध्यान करके उन पर दृढ़ आस्था रक्खे।

सद्गुरु का उपदेश ।

ओ३म् तत्सत् परब्रह्मणे नमः ।

समुद्र जब स्थिर रहता है तब उसे ब्रह्म कहते हैं और उसी समुद्र में जब लहर उठती हैं तब उसी को हम शक्ति या माया कहते हैं वही देश काल निमित्त स्वरूप है। सविशेष सगुण निर्विशेष निर्गुण उसके दो रूप है। पहिले रूप में वह ईश्वर जीव और जगत् है और दूसरे रूप में वह अज्ञात और अज्ञेय है । सर्वशक्तिमत्ता, सर्वव्यापकता, अनन्तदया उसी जगज्जननी जगदम्बा प्रेमरूपिणी भगवती के गुण हैं। प्रत्येक व्यक्ति के पीछे अनन्त शक्ति विद्यमान है। एक कणविन्दु कृष्ण, बुद्ध, खीष्ट आदि और जगत् का विस्तार एक विन्दु को प्रकाशित करता है। एक आत्मा ब्रह्म भिन्न २ सर्व उपाधियों में प्रकाशित होता है। बड़प्पन की डींग दलबन्दी ईर्ष्यादि सदा के लिये छोड़ दो पृथ्वी की भांति सहिष्णु हो जाओ। लड़कपन की चञ्चलता और युवापन की गम्भीरता दोनों मिलाकर सब के साथ प्रेम से रहो।

आत्मा के स्वरूप का व्यक्त और कभी अव्यक्त भाव होता है। आत्मा मानों बादलों से ढके हुए सूर्य की न्याई हैं। हृदय को समुद्र के समान महान् बना डालो, क्षुद्र भावों को पार कर जाओ, अमंगल के आने पर भी आनन्द में उन्मत्त हो जाओ, संसार को एक चित्र की भाँति देखो । जगत् में कोई

तुमको विचलित न कर सकेगा। अहन्ता को दूर कर दृढ़ता से खड़े होजाओ। काम, काँचन, मान, यश को छोड़ कर ईश्वर को दृढ़ता से पकड़ो। विधि निषेध के घेरे में पड़े रहने से आत्मा का प्रचार नहीं होता। जो जितनी ही आत्मानुभूति का प्रकाश कर सकता है उनके उतने ही विधि निषेध कम होजाते हैं। दूसरों की सेवा शुभ कर्म है इसी के प्रभाव से चित्त शुद्ध होता है। इसी के प्रभाव से सब के भीतर बैठे हुए अन्तर्यामी भगवान् प्रकाशित होते हैं। आदेश के अनुसार संगठन करने का उद्योग करना, धर्म का यही लक्ष्य है, यही उद्देश्य है। आदर्श, धार्मिक क्षमा, धृति, शौच, शान्ति, उपासना और ध्यान में परायण आदर्श का अवलम्बन विस्तार ही जीवन और संकीर्णता ही मृत्यु है। जहां प्रेम वहीं विस्तार, जहां स्वार्थता वहीं संकोच। अतएव प्रेम ही जीवन का एक आधार है अवश्य अहैतुक प्रेम करना चाहिये। वही एक मात्र जीवन गति का नियमन करने वाला है जिस कर्म के जीवों से मन में धीरे २ ब्रह्मभाव के उदय होने में सहायता पहुंचे वही कर्म उत्तम है यदि किसी को अधिक सुभीता देना हो तो बलवान की अपेक्षा दुर्बल को अधिक सुभिता दो, सदा दाता बनो, अपना सर्वस्व दे डालो पर बदले में कुछ न चाहो। दूसरों से प्रेम करो, सहायता करो, सेवा करो, तुम से जो कुछ बने दूसरों के लिये करो पर सावधान पलटे में कुछ न चाहो। व्यक्तिगत, देशगत, कालगत, कर्माकर्म का साधन करो।

"परोपकाराय सतांहि जीविनम्"

श्री सच्चिदानन्देश्वराय नमः

ओ३म् श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः।

आलस्यं मृत्युरित्याहुर्यत्नंजीवनमित्युत।

पिपीलिकाः कणशः कणशोऽश्नं समाहृत्य २ विवरं प्रपूरयन्ति॥ पुत्तिका वल्मीकसञ्चयात् क्षणमपि न विरमन्ति। सूर्यादयो-ग्रहामहतावेगेन भ्रमन्तः क्षणमपि विश्रान्ति न कांक्षन्ति। क्षणमपि स्तभिते समीरणे कथमिव व्याकुली भवन्तिजीवाः॥

हे सच्चिदानन्द अनन्त ज्ञान स्वरूप, नित्य शुद्ध, बुद्ध, मुक्त स्वभाव सर्वशक्तिमान सर्व हृदयान्तर्गत सर्वव्यापक प्रभो। यदि मैं तुमको यहां मनुष्य शरीर में रहते हुए भी अपने आत्मा में साक्षात् नहीं कर पाता तो और कहां पा सकूँगा? अय मेरे प्यारे परमात्मा! मेरे हृदय और नेत्रों में प्रकट हो कर साक्षात् दर्शन दिखाओगे तो इस जीव का कल्याण होगा। परमात्मा यह न वह वरंच सारे पदार्थों में है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड उसका जीवन चरित्र है, जो सब के हृदय में विराज-मान होकर वह स्वयं लिख रहा है। सारे पदार्थ परमात्मा के शब्द हैं और बोलते हैं कि आओ २ मेरी ओर आओ। जो ईश्वर ध्वनी को नहीं सुनता वह बहरा है। जो मनुष्य उत्पन्न हुए पदार्थों के सौन्दर्य को नहीं देखता वह अन्धा है, सौन्दर्य विवेक धर्म एक ही हैं। तर्क से हम परमात्मा का चिन्तन करते हैं परन्तु सौंदर्य साक्षात् दर्शन कराता है। वह मनुष्य

जो इन सकल पदार्थों को निरीक्षण करके भी धन्यवाद गायन नहीं करता वह गूँगा है। संसार की सुन्दर वस्तुयें एक विशेष सौन्दर्य की सत्ता की साक्षी हैं प्रत्येक मधुर वस्तु अत्युत्तम मधु को दर्शाती है। जो अन्य पदार्थों के सौन्दर्य और उत्तमता का श्रोत है उसीको परमात्मा कहते हैं। जो वस्तु ईश्वर के समीप है वह उत्तम है और जो दूर है वह निकृष्ट कहाती है। प्रत्येक पवित्रातायें उस पवित्रता के श्रोत को दर्शाती हैं। जो अच्छा है वह अपने से अत्युत्तम श्रेष्ठता के अस्तित्व का प्रमाण है। उच्च स्वर से सकल पदार्थ पुकार रहे हैं कि परमात्मा सब में विद्यमान् है। जब हम किसी वस्तु से प्यार करते हैं तो उसके आभ्यन्तर वास करने वाले परमात्मा के कारण से करते हैं। प्यासा मनुष्य जल की अभिलाषा इसलिये करता है कि जल में परमात्मा निवास करते हैं। परमात्मा भक्तों के हृदय में प्रकट होते हैं। महान् से महान् सुख अच्छे कामों के चिन्तन सेहाता है परमात्मा उन से प्यार करते हैं जो बुरे कामों से घृणा कर श्रेष्ठ कार्यानुरत रहते हैं

सार संग्रह

मंगलाचरण ।

विघ्नेशं विघ्नहर्तारं, गणराजं गजाननम् ।
शारदां वरदां नौमि, बुद्धिजाड्यापनुत्तये ॥ १ ॥

दोहे

सदा भवानी दाहिनी, सन्मुख रहत गणेश ।
पांच देव रक्षा करें, ब्रह्मा विष्णु महेश ॥ १ ॥
नमो नमो गोविन्द गुरु, बिनवौं अभिजन सोय ।
पहले भये प्रणाम तिन ,नमो जो आगे होय ॥ २ ॥
नमो नमो श्रीरामजू, सत चित आनन्द रूप ।
जेहि जानत जग स्वप्नवत, नाशत भ्रम तम कूप ॥ ३ ॥
वन्दौं सन्त समान चित, हित अनहित नहिं कोय ।
अञ्जलि गति शुभ सुमन जिमि, सम सुगन्ध कर दोय ॥

चौपाई ।

जय २ जय गिरिराज किशोरी । जय महेश मुखचन्द्र चकोरी ॥
जय गजबदन षड़ानन माता । जगत जननि दामिनीद्युतिगाता ॥
बन्दौ राम नाम रघुवर के । हेतु कृशानु भानु हिम करके ॥

गाइये गणपति जगबन्दन ॥ टेक ॥
शङ्कर सुवन भवानी नन्दन ॥
सिद्धिसदन गजबदन बिनायक, कृपासिन्धु तुमहो सबलायक ॥
मोदक मुद प्रिय मंगलदाता, विद्या वारिधि बुद्धि विधाता ॥
मांगत तुलसीदास कर जोरे, बसहु राम सिय मानस मोरे ॥

गोविन्दाष्टक ।

सत्यं ज्ञान मनन्तं नित्य मनाकाशं परमाकाशम् ।
गोष्ठप्राङ्गणरिङ्गणलोल-मनायासं परमायासम् ॥
माया कल्पित नानाकार-मनाकारं भुवनाकारम् ।
क्ष्मामानाथ मनाथं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ १ ॥

मृत्सामत्सि हेति यशोदा, ताडन शैशव संत्रासम् ।
व्यादित् वक्त्रा लोकित लोका लोक चतुर्दश लोकालिम् ॥
लोकत्रयपुर मूलस्तम्भं लोकालोकमनालोकम् ।
लोकेशं परमेशं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ २ ॥

त्रैविष्टपरिपुवीरघ्नं, क्षितिभारघ्नं भवरोगघ्नम् ।
कैवल्यं नवनीताहारमनाहारं भुवनाहारम् ॥
वैमल्यस्फुट चेतो वृत्ति, विशेषाभासमनाभासम् ।
शैवं केवल शान्तं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ३ ॥

गोपालं प्रभु लीला विग्रह, गोपालं कुल गोपालम् ।
गोपी खेलन गोवर्द्धनधृत, लीला लालित गोपालम् ॥

गोभिर्निगदित गोविन्दस्फुट नामानं वहु नामानम् ।
गोधी गोचर दूरं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ४ ॥
गोपी मण्डल गोष्ठी भेदं, भेदावस्थं भेदाभम् ।
शश्वद् गोखुर निर्धूतोद्धत,धूली धूसर सौभाग्यम् ॥
श्रद्धा भक्ति गृहीत्वा नन्द,मचिन्त्यं चिन्तित सद्भावम्।
चिन्तामणि मणिमानं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ५ ॥
स्नान व्याकुल योषिद् वस्त्रमुपादायाग मुपारूढ म् ।
व्यादित संतीरथ दिग्वस्त्रा, वस्त्र मुपाकर्षन्तन्ता ॥
निर्धूतद्वय शोक विमोहं, वुद्धं वुद्धेरन्तस्थम् ।
सत्तामात्र शरीरं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ६ ॥
कान्तं कारण कारणमादि, मनादि काल मना भासम्।
कालिन्दि गत कालिय शिरसि, नृत्यन्तं मुहुर्नृत्यन्तम्॥
कालं काल कलातीतं, कलिताशेष कलिदोषघ्नम् ।
कालत्रय गति हेतुप्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ७ ॥
वृन्दावन भुवि वृन्दारकगण वृन्दाराधित वन्देहम् ।
कुन्दाभामल मंदस्मेर, सुधानन्दं सुहृदानन्दम् ॥
वन्द्या शेष महामुनि मानस, वन्द्यानन्दपदद्वन्दम् ।
वन्द्या शेष गुणाब्धिं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ८ ॥
गोविंदाष्टकमेतद्धीते, गोविंदार्पित संचेता ।
गोविंदांघ्रि सरोजध्यान, सुधाजलधौत समस्ताघः ॥
गोविंदाच्युत माधव विष्णो गोकुल नायक कृष्णेति ।
नित्यं गायनयास्यति भक्तो गोविंदं परमानन्दम् ॥ ९ ॥

गुरोरष्टकम् ।

शरीरं स्वरूपं तथा वा कलत्रं यशश्चारु चित्र धनं मेरुतुल्यम् ।
गुरोरंघ्रि पद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥
कलत्रं धनं पुत्र पौत्रादि सर्वं गृहं बांधवाः सर्वमेतद्धि जातम् ।
गुरोरंघ्रि पद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किम्० ॥ २ ॥
षडंगादि वेदो मुखे शास्त्र विद्या कवित्वादि गद्यं सुपद्यं करोति ।
गुरो रंघ्रि पद्मे० ॥ ३ ॥
क्षमा मन्डले भूप भूपाल वृन्दैः सदा सेवितं यस्य पादरविंदम् ।
गुरोरंघ्रि पद्मे० ॥ ४ ॥
यशो मे गतं दिक्षु दानः प्रतापात् जगद्वस्तु सर्वं करे यत् प्रसादात् ।
गुरो रंघ्रिपद्मे० ॥ ५ ॥
न भोगे न योगे न वावाजि राजौ न कान्ता मुखे नैव वित्तेषुचित्तम्
गुरो रंघ्रि पद्मे० ॥ ६ ॥
अरण्ये न वासः स्व गेहे न कार्ये न देहे मनो वर्तते मे त्वनर्घ्ये ।
गुरोरंघ्रि पद्मे० ॥ ७ ॥
अनर्घ्याणि रत्नानि भुक्तानि सम्यक्समालिंगता कामिनी यामिनीषु
गुरो रंघ्रि पद्मे० ॥ ८ ॥
गुरोष्टकं यः पठेत्पुण्यदेही यतिर्भूपतिर्ब्रह्मचारी च गेही ।
लभेद्वांछितार्थं पदं ब्रह्म संज्ञं गुरोरुक्तवाक्ये मनो यस्य लग्नम् ॥ ९

गुरु भक्ति ।

सब धरती कागज करूं, लेखनि सब बनराय।
सात सिन्धु की मसि करूं, गुरु गुण लिखा न जाय ॥ १ ॥

गुरु नाम है ज्ञान का, शिष्य सीख ले सोय।
बिन पदई मर्याद बिन, गुरु शिष्य नहिं होय ॥ २ ॥

परमेश्वर अरु गुरु ये, दोनों एक समान।
सुन्दर कहत विशेष यह, गुरु ते पावें ज्ञान ॥ ३ ॥

गुरु धोबी शिष कापड़ा, साबुन सिरजनहार।
सुरत सिला पर धोइये, निकसे रङ्ग अपार ॥ ४ ॥

तीरथ न्हाये एक फल, सन्त मिले फल चार।
सत्गुरु मिले अनेक फल, कहे कबीर विचार ॥ ५ ॥

कबीर ते नर अन्ध हैं, गुरु को कहते और।
हरि रूठे गुरु में लखे, गुरु रूठे नहिं ठौर ॥ ६ ॥

भेदी लीना साथ में, दीनी वस्तु लखाय।
कोटि जन्म का पन्थ था, पल में पहुंचा जाय ॥ ७ ॥

कबीर शिष्य को चाहिये, गुरु को सरवस देय।
गुरु को ऐसा चाहिये, शिष्य का कछु न लेय ॥ ८ ॥

जैसी लौ पंहिले लगी, तैसी निबहे ओड़।
अपने तन की को गिने, तारे पुरुष किरोड़ ॥ ९ ॥

सही टेक है तासु की, जाके सत्गुरु टेक।
टेक निबाहें देह भर, रहे शब्द मिल एक ॥ १० ॥

कै खाना कै सोवना, और न कोई चीत।
सत्गुरु शब्द बिसारिया, आदि अन्त का मीत ॥ ११ ॥
ओछे दिन पाछे गये, गुरु से किया न हेत।
अब पछतावा क्या करे, चिड़िया खाया खेत ॥ १२ ॥
कबीर गुरु की भक्ति बिन नारि कूकरी होय।
गली २ भूसत फिरे, टूक न डारे कोय ॥ १३ ॥
कबीर यह तन जात है, सके तो ठौर लगाय।
कै सेवा कर साधु की, कै गुरु के गुन गाय ॥ १४ ॥
उज्वल पहने कापड़ा, पान सुपारी खाय।
कबीर गुरु की भक्ति बिन, बाँधा यमपुर जाय ॥ १५ ॥
ईश्वर ते गुरु में अधिक, धारे भक्ति सुजान।
बिन गुरु भक्ति प्रवीण हूं, लहैं न आत्म ज्ञान ॥ १६ ॥
हरि रूठे कछु डर नहीं, तू भी दे छिटकाय।
गुरु को राखे शीस पर, सब विधि करे सहाय ॥ १७ ॥
मात तात भ्राता सुहृद, इष्ट देव नृप प्राण।
अनाथ सुगुरु सब ते अधिक दान ज्ञान विज्ञान ॥ १८ ॥
वेद उदधि बिन गुरु लखे, लागै लोन समान।
बादर गुरु मुख द्वार है, अमृत से अधिकान ॥ १६ ॥
ऐसा दृढ़ विश्वास कर, तरे जो जीव अनेक।
गुरु नाम है ज्ञान का, शिष्य टेक गहे एक ॥ २० ॥
कबीर मन तो एक है, भावें तहां लगाय।
भावें गुरु की भक्ति कर, भावें विषय कमाय ॥ २१ ॥
मन मुरीद संसार है, गुरु मुरीद कोई साध।

जो माने गुरु वचन को, ताका मता अगाध ॥ २२ ॥
शिष शाषा बहुतै किया, सत्गुरु किया न मित्त ।
चाले थे सतलोक को, बीचहि अटका चित्त ॥ २३ ॥
बड़े बड़ाई पाय कर, रोम २ अहंकार ।
सत्गुरु के परचे बिना, चारों बरन चमार ॥ २४ ॥
सहजो गुरु दीपक दियो, नैना भये अनन्त ।
आदि अन्त मध्य एक हीं, सूझ परे भगवन्त ॥ २५ ॥
ब्रह्म रूप अहि ब्रह्मवित, ताकी वाणी वेद ।
भाषा अथवा संस्कृत, करत भेद भ्रम छेद ॥ २६ ॥
जिमि चन्द्रहिं लहि चन्द्रमणि, अमी द्रवत तत्काल ।
गुरु मुख निरखत शिष्य के, अनुभव होत विशाल ॥ २७ ॥
गुरु बिनु भ्रम लगि भूसिये, भेद लिये बिनु श्वान ।
केहरि वपु छाया निरखि, परयो कूप अज्ञान ॥ २८ ॥
सहजो कारज जगत के, गुरुबिन पूरे नाहिं ।
हरि तो गुरु बिन क्यों मिलें, समझ देख मन माहिं ॥ २९ ॥
परमेश्वर सूं गुरु बड़े, गावत वेद पुरान ।
सहजो हरि के भक्ति है, गुरु के घर भगवान् ॥ ३० ॥
अष्टादश और चार पट, पढ़ पढ़ अर्थ कराहिं ।
भेद न पावे गुरु बिना, सहजो सब भरमाहिं ॥ ३१ ॥
सकल बिकल सब छोड़कर, गुरु चरणन चित लाव ।
सहजो निश्चय हर जपो, बहुर न ऐसो दाव ॥ ३२ ॥
सहजो सतगुरु के मिले, भये और सूँ और ।
काग पलट गति हँस होय, पाई भूली ठौर ॥ ३३ ॥

सहजो गुरु ऐसे मिले, सम दृष्टि निर्लोभ।
शिष को प्रेम समुद्र में, करदे झोबा झोब ॥ ३४ ॥
सहजो गुरु बहुतक फिरें, ज्ञान ध्यान सुधि नाहं।
तार सकें नहिं एक को, गहें बहुत की बांह ॥ ३५ ॥
अठ सठ तीरथ गुरु चरण, पर्वी होत अखण्ड।
सहजो ऐसा धामना, सकल अन्ड ब्रह्मण्ड ॥ ३६ ॥
गुरु आज्ञा दृढ़ कर गहे, गुरु मति सहजो चाल।
रोम रोम गुरु को रटै, सो शिष्य होय निहाल ॥ ३७ ॥
गुरु आज्ञा माने नहिं, गुरुहि लगावें दोष।
गुरु निन्दक जग में दुखी, मुये न पावहिं मोष ॥ ३८ ॥
गुरु बचन हिय ले धरो, ज्यों कृपण के दाम।
भूमि गढ़े माथे दिये, सहजो लहै न राम ॥ ३९ ॥
ऐसे तो गुरु बहुत हैं, धूत धूत धन लेहिं।
सहजो सत्गुरु जो मिले, भक्ति दान फल देहिं ॥ ४० ॥
बार बार नाते मिले, लख चौरासी मांह।
सहजो सत्गुरु ना मिले, पकर निकासे बांह ॥ ४१ ॥
सहजो गुरु दर्शन दियो, पूरि रहें सब ठौर।
जहां तहां गुरुहि लखें, दृष्टि न आवे और ॥ ४२ ॥
साधु मिले गुरु पाइयां, मिट गये सब सन्देह।
सहजो को सब हो गयो, कह गिरवर कह गेह ॥ ४३ ॥
सहजो गुरु प्रसन्न हो, मूँद लिये दोउ नैन।
फिर मोसूं ऐसे कहो, समझ लेउ यह सैन ॥ ४४ ॥
चींटी जहां न चढ़ सके, सरसों ना ठहराय।

सहजो को वा देश में, सत्गुरु दई बसाय ॥ ४५ ॥
जब सत्गुरु कृपा करैं, खोल दिखावैं नैन ।
जग झूठा दीखन लगे, देह परे की सैन ॥ ४६ ॥

श्लोक ।

न गुरोः सदृशी माता, न गुरोः सदृशः पिता ।
यस्तारयति संघोरं, संसाराब्धिं सुदुस्तरम् ॥ १ ॥

चौपाई ।

बन्दौं गुरु पद पद्म परागा । सुरुचि सुवास सरस अनुरागा ।
मन से प्रेम राम सम राखे । ह्वै प्रसन्न गुरु इमि अभिलाखे ॥
तन करि बहु सेवा बिस्तारे । आज्ञा गुरु की कबहुं न टारे ॥
गुरुबिन ब्रह्म नहीं नर पावे । गुरु बिन तत्व कौन दर्शावे ॥
दोष दृष्टि स्वप्ने नहिं आने । हरि हर ब्रह्म गंग रवि जाने ॥
गुरु बिन भवनिधि तरै न कोई । जो बिरञ्चि शंकर सम होई ॥
नैनस्रवे जल निजहित लागी । जरे न पावे देह बिरागी ॥
कहैं सत्य प्रिय बचन विचारी । जागत सोवत शरण तुम्हारी ॥
जननी जनक गुरु बन्धु हमारे । कृपानिधान प्राण ते प्यारे ॥
मानी कुटिल कुभाग्य कुजाती । गुरु कर द्रोह करौं दिन राती ॥
जे शठ गुरु सम ईर्षा करहीं । रौरव नरक कल्प शत परहीं ॥
सद्गुरु ज्ञान विराग योग के । विबुध वैद्य भव भीम रोग के ॥
गुरु के बचन प्रतीत न जेही । स्वप्नेहु सुगम न सुख सिधि तेही ॥

गुरु का बदला दिया न जाई। मन में उपजत है सकुचाई॥
शेषसहस्त्रमुख निशिदिन गावे। गुरु स्तुति का अन्त न पावे॥

दोहाः–सब धरती कागज करूं, लेखनी सब बन राय।
सात सिन्धु की मसी करूं, गुरु गुण लिखा न जाय॥

गुरु के प्रेम पन्थ सिर दीजै। आगा पीछा कबहुं न कीजै
गुरु के पन्थ होय सो होई। मारग आन चलो मत कोई॥
गुरु का पन्थ पैज्र का पूरा। गुरु के पन्थ चले सोई शूरा॥
गुरु के पन्थ भक्ति उजियारा। गुरु के पन्थ नहीं संसारा॥
गुरु के पन्थ चले सतवादी। सहजो पावे भेद अनादी॥
गुरु के चरण भक्ति फलदायक। सहजो गुरु के चरण सहायक॥
गुरु पग परसे बन्धन छूटे। मोह ममता की फाँसी टूटे॥
गुरु की आज्ञा दृढ़ कर गहिये। गुरु की आज्ञा ही में रहिये॥
गुरु आज्ञा बिन काज न कीजै। हानि होय तो होने दीजै॥
गुरु की आज्ञा विघ्न न होई। गुरु की आज्ञा गुरु मुख कोई॥
गुरु की आज्ञा सकल शिरोमन। गुरुकी आज्ञा चलै सो हरिजन॥
जो कोई गुरु की आज्ञा भूलै। फिर २ कष्ट गर्भ में झूले॥
गुरु के बचन हिये बिच धारो। गुरुमुख गुरुके शब्द सम्हारो॥
गुरु के शब्द प्रेम उलझावे। गुरु शब्दां हरि आन मिलावे॥
गुरु के शब्द राह सोई चलना। वेद पुराण कहा लै करना॥
चरणदास गुरु शब्द तुम्हारे। हमरे भरम फन्द सब जारे॥
गुण सब गुरु के चरणों माहीं। सहजो शिष सो बिसरे नाहीं॥
चरणदास गुरु आज्ञा पूरी। बिन आज्ञा करनी सब कूरी॥
राम तजूं पै गुरु न बिसारूं। गुरु के सम हरि को न निहारूं॥

हरि ने जन्म दियो जग मांहीं । गुरु ने आवा गमन छुटाहीं ॥
हरि ने पाँच चार दिये साथा । गुरु ने लई छुड़ाय अनाथा ॥
हरि ने कुटम्ब जाल में गेरी । गुरु ने काटी ममता बेरी ॥
हरि ने करम भरम भरमायो । गुरु ने आतम रूप लखायो ॥
हरि ने मोसूँ आप छिपायो । गुरु दीपक ले ताहि दिखायो ॥

दोहा ।

श्वासों की कर सुमरनी, अपजा का कर जाप ।
ब्रह्म तत्व का ध्यान धर, सोऽहं आपे आप ॥

योग ।

इन्द्रिन को मन वश करे, मनकूं वश करे पौन ।
अनहद वश करे वायु को, अनहद के ले तौन ॥ १ ॥
एक भँवर गुञ्जारसी, दूजा घूँघर होय ।
तीजा शब्द है शंख जू, चौथा घण्टा सोय ॥ २ ॥
पंचम ताल जो बाज ही, छटें, सु मुरली नाद ।
सप्तम भेरी गाज ही, अष्ट मृदङ्गहि नाद ॥ ३ ॥
नव दश गर्जनसिंह नफीरी, चरणदास सुन जोय ।
पावहिं दर्शन ब्रह्म के, मनसा पूरण होय ॥ ४ ॥
सेवक स्वामी होत हैं, सुने जो अनहद नाद ।
जीव ब्रह्म हो जात है, पावे अपनी आद ॥ ५ ॥
इन्द्रीय पलटे मन विषे, मन पलटे बुध माहिं ।
बुधि पलटै हरि ध्यान में, फेर होय लय जाहिं ॥ ६ ॥

देखे भृकुटी मध्य है, निश्चल दृष्टि लगाय।
ध्यान किये पहले जहां, अग्नि फूल दृष्टाय ॥ ७ ॥
केते दिवसन मांह हि, दीप ज्योति प्रगटाय।
फिर तारों की मालसी, दामिनी बहु दमकाय ॥ ८ ॥
बहुत चन्द सूरज घने, देखे कोटि अनन्त।
झिलमिल २ तेजमय, ध्यान मांहिं दर्शन्त ॥ ९ ॥
जल अथाह में डूब ज्यों, देखे दृष्टि उघार।
जो दीखे सो नीर है, दशों दिशि अपरम्पार ॥ १० ॥
ज्योतिमयी मण्डल लखे, हृदय कमल में होय।
तामें देखे और इक, दीवे की सी लोय ॥ ११ ॥
ध्यानी ध्यान लगाय के रहै राम लौ लाय।
आपा बिसरे हर मिले, बहुर न उपजे आय ॥ १२ ॥

ज्ञान।

परमानन्द सरूप तू, नहिं तो में दुःख लेश।
अज अविनाशी ब्रह्म चित, क्यों माने हिय क्लेश ॥ १ ॥
आप भुलानो आप में, बंध्यो आप ही आप।
जाको तू ढूंढत फिरे, सो तू आपहि आप ॥ २ ॥
नहिं कारण नहिं कार्य कछु, नहीं काल नहिं देश।
शिवस्वरूप पूरण अचल, सजाति विजाति नहिं लेश ॥ ३ ॥
चली पूतरी लवण की, थाह सिन्धु की लैन।
अनाथ आप आपे भई, पलट कहे को बैन ॥ ४ ॥

राग द्वेष मन के धरम, तू तो मन नहीं होय।
निर्विकल्प व्यापक अमल, सुख स्वरूप तू सोय ॥ ५ ॥
जैसे साँचे में परयो, होत कनक बहु अङ्ग।
नानावत यों ब्रह्म में, लय उपाधि को सङ्ग ॥ ६ ॥
ज्यों तिल माहीं तैल है, ज्यों चकमक में आग।
तेरा प्रीतम तुज्झ में, जाग सके तो जाग ॥ ७ ॥
पहुप मध्य ज्यों बास है, व्याप रहा सब मांहि।
सन्तो मांही पाइये, और कहूं कछु नाहिं ॥ ८ ॥
गागर ऊपर गागरी, चांले ऊपर द्वार।
शूली ऊपर सांथरा, तहां बुलावे यार ॥ ९ ॥
भेद ज्ञान तौलों भलो, जौलों मुक्ति न होय।
परम जात परघट भई, तब विकल्प नहिं होय ॥ १० ॥
तू है सो परमात्मा, मैं हूं ब्रह्म स्वरूप।
यही आत्मा ब्रह्म है, जीव है ब्रह्म स्वरूप ॥ ११ ॥
उलट समानो आप में, प्रगटी ज्योति अनन्त।
साहब सेवक एक संग, खेलैं सदा बसन्त ॥ १२ ॥
अलख लखा लालच लगा, कहत न आवे बैन।
निज मन धसा सरूप में, सत्गुरु दीन्ही सैन ॥ १३ ॥
पिञ्जर प्रेम प्रकाशिया, जागी ज्योति अनन्त।
संशय छूटा भय मिटा, मिला पियारा कन्त ॥ १४ ॥
गुरु मिले शीतल भया, मिटी मोह तन ताप।
निस बासर सुख निधि लहूं, अन्तर प्रकटे आप ॥ १५ ॥
सत् चित् आनन्द एक तू, ब्रह्म अजन्य असंग।

विभु चेतन माया करे, जगको उत्पत्ति भंग ॥ १६ ॥
सब ही के भीतर बसे, सब का जानन हार।
वाही ते परगट भई, नाना वस्तु अपार ॥ १७ ॥
देह मरे तू है अमर, पार ब्रह्म है सोय।
अज्ञानी भटकत फिरे, लखे सो ज्ञानी होय ॥ १८ ॥
देह नहीं तू ब्रह्म है, अविनाशी निर्वान।
नित न्यारो तू देह से, देह कर्म सब जान ॥ १९ ॥
डोलन बोलन सो बनो, भक्षण करन अहार।
दुख सुख मैथुन रोग सब, गर्मी शीत निहार ॥ २० ॥
जाति वर्ण कुल देह की, सूरति मूरति नाम।
उपजै विनशै देह सो, पांच तत्व को ग्राम ॥ २१ ॥
पावक पानी वायु है, धरती अरु आकाश।
पांच तत्व के कोट में, आय कियो तैं बास ॥ २२ ॥
निराकार निर्लिप्त तू, देह जान आकार।
आपन देही मान मत, यही ज्ञान तत सार ॥ २३ ॥
गलै कटै काया यही, बनै मिटै फिर होय।
जीव अविनाशी नित्य है, जाने बिरला कोय ॥ २४ ॥
निराकार अद्वैत अचल, निर्वासी तू जीव।
निरालम्ब निर्वैरसो, अज अविनाशी सीव ॥ २५ ॥
चेतन ज्यों की त्यों सदा, सदा अकर्ता जोय।
सब कर्मन सों रहित है, आतम ऐसो होय ॥ २६ ॥
काहू से उपज्यो नहीं, तातें भयो न कोय।
वह न मरै मारै नहीं, राम कहावे सोय ॥२७॥

दृष्टि मुष्ट आवै नहीं, रूप न देखो जाय।
बिन सूरत बिन नाम को, घट २ रहो समाय ॥ २८ ॥
जैसे तिल में तैल है, फूल मध्य ज्यों बास।
दूध मध्य ज्यों घीव है, लकड़ी मध्य हुतास ॥ २९ ॥
सत चेतन आनन्द है, आदि अन्त मध्य हीन।
आदि अन्त आकार को सो तू झूठा चीन ॥ ३० ॥
इन्द्रिय जान सके नहीं, मन बुद्धि लहै न थाय।
ज्ञान दृष्टि पहिचानिये, वासों वाको पाय ॥ ३१ ॥
सब में देखे आपकूं, सब कूं अपने माहिं।
पावै जीवन मुक्त को, या में संशय नाहिं ॥ ३२ ॥
जल थल पावक राम है, राम रमो सब माहिं।
हरि सब में सब राम में, और दूसरा नाहिं ॥ ३३ ॥
ऊंच नीच निर्गुण गुणी, रङ्क नाथ अरु भूप।
हूं घट बढ़ कासों कहूं, सब आनन्द स्वरूप ॥ ३४ ॥
शस्त्र छेद सके नहीं पावक सके न जारि।
मरै मिटै सो तू नहीं, गुरु गम भेद निहारि ॥ ३५ ॥
अज्ञ तज्ञ नहिं शुभाशुभ, नहिं ईश्वर नहिं जीव।
सत्य झूंठ मो में नहीं, अमल समल त्रिय पीव ॥ ३६ ॥
जैसे दिनकरके उदय, दीपक द्युति दुरि जात।
तैसे ब्रह्मानन्द में, आनन्द सभी बिलात ॥ ३७ ॥
क्षुधा पिपासा हर्ष पुनि, शोक जन्म अरु अन्त।
ये षट उरमी धरम धन, आतम रहित अनन्त ॥ ३८ ॥
बसन भयो ता सुत में, सूतन बसन मंझारि।

आपस में सब पूतरी, करें परस्पर रारि ॥ ३९ ॥
ज्ञानी करे अनेक कर्म, विधिवत जग व्यवहार।
लिपे न धूम अकाश ज्यों, जान्यो जगत असार ॥ ४० ॥
जाग्रत स्वप्न तहाँ नहीं, जहं सुषुप्ति मन लीन।
मैं तू तहाँ न सम्भवे, आतम निश्चय कीन ॥ ४१ ॥
जाग्रत माहिं सुषुप्ति, मतवारे की केल।
करे चेष्टा बाल ज्यों, आतम सुख रहो झेल ॥ ४२ ॥
जैसे भूजे अन्न में उद्भवता भई छीन।
तैसे आत्मवान की, भई जगत मति लीन ॥ ४३ ॥
जो ताकी पूजा करत, सञ्चित सुकृत सुलेत।
दोष दृष्टि तिहि जो लखे, ताहि पाप फल देत ॥ ४४ ॥
हेतु मोक्ष को ज्ञान इक, नहीं कर्म नहिं ध्यान।
रज्जू सर्प तब ही नशै होय रज्जू को ज्ञान ॥ ४५ ॥

वैराग।

जगत देखि मैं परो निज, केवल दुख ता माहिं।
सत्य २ पुनि सत्य कहुं, सुख स्वपने हू नाहिं ॥ १ ॥
सहजो भज हरि नाम को, तजो जगत् सूं नेह।
अपना कोई है नहीं, अपनी सगी न देह ॥ २ ॥
यही कहैं गुरु देव जी, यही पुकारें सन्त।
सहजो तज या जगत को, तोहि तजेंगे अन्त ॥ ३ ॥
झूठा नाता जगत का झूठा है घर वास।
यह तन झूठा देख कर, सहजो भई उदास ॥ ४ ॥

जब लग चावल धान में, तब लग उपजे आय।
जग छिलके को तज निकस, मुक्त रूप होजाय ॥ ५ ॥
कुटम्ब संघाती बीच में, आदि अन्त नहिं होय।
बीच मिले बीचहिं गये, सहजो संग न कोय ॥ ६ ॥
सहजो स्वारथ सब लगे, दारा सुत अरु बीर।
जीवत जोते बैल ज्यों, मुये बटावें सीर ॥ ७ ॥
मर बिछुरे जो कुटुम्ब से, बहुर न देखे आय।
महल द्रव्य सन्तान को, सहजो पचे बलाय ॥ ८ ॥
सहजो जीवत सब सगे, मुये निकट नहिं जांय।
रोवें स्वारथ आपने, स्वपने देख डरांय ॥ ९ ॥
दरद बटाय सके नहीं, मुये न चालें साथ।
सहजो क्योंकर आपने, सब नाते बरबाद ॥ १० ॥
सहजो गुरु परताप से, ऐसी जान पड़ी।
नहीं भरोसा स्वाँस का, आगे मौत खड़ी ॥ ११ ॥
स्वाँस खज़ानो जात है, ताकि सूधी नाहिं।
सहजो खरचो कहा रहो, कर हिसाब घर माहिं ॥ १२ ॥
झुर झुर कर पिंजरा भये, रोय गमाये नैन।
मर गये सो नाहिं मिले, सहजो सुने न बैन ॥ १३ ।
जो रोवे सो बाहुरे, तो रोवो दिन रात।
तन छीजे वह ना मिले, सहजो कूड़ी बात ॥ १४ ॥
तेरा था तो क्यों मुआ, पकड़ न राखी बाहिं।
सहजो बहुतक मिल छुटे, चौरासी के माहिं ॥ १५ ॥
कबहुंक तेरा बाप है, कबहूंक तेरा पूत।

कहहुंक तेरा मित्र है, कबहुंक तेरा दूत ॥ १६ ॥
कल्प रोय पछताय थक, नेह तजो कै क्रूर।
पहिले ही से जो तजै, सहजो समरथ शूर ॥ १७ ॥
यों खाता यों डोलना, मीठे कहता बोल।
यह बिचार तू मत करे, चित रहे डावांडोल ॥ १८ ॥
बैठ पहरयूं चालता, वसतर भूषण लाल।
यह विचार तू मत करै, छल रूपी जग जाल ॥ १९ ॥
सहजो लोक परलोक की, नहीं वासना ताहि।
सो वह ब्रह्म स्वरूप है, सागर लहर समाहि ॥ २० ॥
जाकी गुरु में वासना, सो पावे भगवान।
सहजो चौथे पद बसे, गावत वेद पुरान ॥ २१ ॥
परमेश्वर की वासना, अन्त समय मन माहिं।
तन छूटे हरि क्यों मिले, उपजै विनशै नाहिं ॥ २२ ॥
चौरासी योनी भुगत, पायो मनुष्य शरीर।
सहजो चूके भक्ति बिन, फिर चौरासी पीर ॥ २३ ॥
द्रव्य हेतु हरि को भजे, धन ही की परतीत।
स्वारथ ले सब को मिले अन्तर की नहिं प्रीति ॥ २४ ॥

सत्संग।

जगत मोह फांसी अजर, कटे न आन उपाय।
जो नित सतसङ्गत करे, सहज मुक्त हो जाय ॥ १ ॥
कामधेनु अरु कलपतरु, जो सेवत फल होय।
सवसङ्गति छिन एक में प्राणी पावे सोय ॥ २ ॥

सतसङ्गति निज कलपतरु, सकल कामना देत।
अमृतरूपी वचन कहि, तिहूं ताप हरि लेत ॥ ३ ॥
पृथ्वी पावन होत है, सब ही तीरथ आद।
चरणदास हरि यों कहैं, चरण धरे जब साध ॥ ४ ॥
काम क्रोध मद लोभ हनि, गर्व तजै जो साध।
राम नाम हिरदे धरे, रोम रोम आराध ॥ ५ ॥
साधु सोवे तहां सोय रहूं, भोजन संग ही जेऊं।
जो वह गावे प्रेम से, मैं हूं ताली देऊं ॥ ६ ॥
चक्रवर्ति को सुख नहीं, नहीं सुखी देवेश।
बीत राग मुनि हैं सुखी, बसैं एकान्त हमेश ॥ ७ ॥
सोई सुखी संसार में, जो सुमरे भगवान।
राग द्वेष जाके नहीं, सोई चतुर सुजान ॥ ८ ॥
भोजन छादन की नहीं, सोच करे हरिदास।
विश्वभरण प्रभु करत हैं, सो किमि करैं निरास ॥ ६ ॥
बिनु सतसङ्ग न हरि कथा, तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गये बिनु राम पद, होई न दृढ़ अनुराग ॥ १० ॥
मुक्ति द्वार पालक चतुर, सम सन्तोष विचार।
चौथी सतसङ्गत धरम, महापूज्य निरधार ॥ ११ ॥
जो वह दया करैं तेरे पर, प्रेम पिलावैं भङ्ग।
जाके अमल दरश है, हरि को नैना आवे रङ्ग ॥ १२ ॥
सुत दारा अरु लक्ष्मी, पापी के भी होय।
सन्त समागम हरि कथा, तुलसी दुर्लभ दोय ॥ १३ ॥
जब लग आश शरीर की, निर्भय भया न जाय।

काया माया मन तजै, चौरें रहे बजाय ॥ १४ ॥
कथा कीर्तन कलि विषे, भवसागर की नाव ।
कहे कबीर जग तरन को, नाहिंन और उपाव ॥ १५ ॥
कथा कीर्तन सुनन को, जो कोई करे सनेह ।
कहे कबीर ता दास की, मुक्ति में नहिं सन्देह ॥ १६ ॥
सुरती जो हर मिलन की, तो करिये सत्संग ।
बिना परिश्रम पाइये, पूरण परमानन्द ॥ १७ ॥
सन्त संग अपवर्ग कर, कामी भव कर पन्थ ।
कहहिं सन्त कवि कोविद, श्रुति पुराण सद्ग्रन्थ ॥ १८ ॥
जब जब दर्शन राम दें, तब मागौं सत्सङ्ग ।
चाहौं पदवी भक्त की, चढ़े सो नवधा रङ्ग ॥ १९ ॥
नर संसारी लग्न में, दुख सुख सहे करोर ।
नारायण हरि भजन में, जो होवे सो थोर ॥ २० ॥
नारायण कीजे सदा, दुष्ट सङ्ग का त्याग ।
जिमि लुहार के ढिंग परे, बदन चिंगारी आग ॥ २१ ॥
अर्ब खर्ब लों द्रव्य हैं, उदय अस्त लों राज ।
तुलसी जो निज मरण है, तो आवे केहि काज ॥ २२ ॥
सिंहों के लँहड़े नहीं, हंसों की नहीं पांत ।
लालों की नहिं बोरियाँ, साधु न चले जमात ॥ २३ ॥
जात पांत नहिं पूछिये साधु को पूछ लीजिए ज्ञान ।
मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान ॥ २४ ॥
रवि को तेज घटे नहीं, जो घन जुड़े घमण्ड ।
साधु वचन पलटे नहीं, पलट जाय ब्रह्मण्ड ॥ २५ ॥

जननी जने तो भक्त जन, कै दाता कै शूर।
नाहीं तो तू बांझ रह, काहे गंवावे नूर ॥ २६ ॥
ग्रह गांठ, नहीं बांधते, जब देखे तब खाहिं।
हरि तिन के पीछे फिरै, मत भूखे रह जाहिं ॥ २७ ॥
जां घर साधु न सेवई, हरि की सेवा नाहिं।
ते घर मरघट सार के, भूत बसे ता माहिं ॥ २८ ॥
सुन्दर मानुष देह की, महिमा बरणें साध।
जामें बसके पाइये, पूरण ब्रह्म अगाध ॥ २९ ॥
काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोह की धार।
तिन में अति दारुण दुखद, माया रूपी नार ॥ ३० ॥
एक अज्ञानी के हिये, बर्तें मते अनेक।
अनाथ सुज्ञानी कोटि को, निश्चय निज मत एक ॥ ३१ ॥
अज्ञानी आसक्त मति, करे सुबन्धन हेत।
ज्ञानी के आसक्ति नहिं, तजे न कछु गह लेत ॥ ३२ ॥
भ्रमण करत जो पवन ते, सूखो पीपर पात।
शेष करम प्रारब्ध से, क्रिया करत दरशात ॥ ३३ ॥
एक घड़ी आधी घडी, आधी हूं में आध।
तुलसी सङ्गत साधु की, गहे कोटि अपराध ॥ ३४ ॥
साधु की निन्दा बुरी, मत कोई कीजो भूल।
दुनियां में दुख पाइये, रहे नरक में भूल ॥ ३५ ॥
रक्त छाँडि पय को गहे, ज्यों रे गउ का बच्छ।
औगुन छांड गुन को गहे, ऐसा साधू लच्छ ॥ ३६ ॥
छाजन भोजन प्रीति सो, दीजे साधु बुलाय।

जीवत यश है जगत में, अन्त परम पद पाय ॥ ३७ ॥
दोय बख़त ना कर सके, तो दिन में कर इकबार।
कबीर साधू दरशते, उतरे भवजल पार ॥ ३८ ॥
कबीर मेरे साधु की, निन्दा करो मत कोय।
जो पै चन्द कलङ्क है, तउ उजियारा होय ॥ ३९ ॥
जो मोय अरपे प्रीति से, सन्तन मुख होय खाऊं।
सन्तन के मैं सङ्ग रहूं, अन्त कहूं नहिं जाऊं ॥ ४० ॥
साधू महिमा को कहे, शोभा अधिक आपर।
रसना दोय हजार सों, शेषहुं जावैं हार ॥ ४१ ॥
भवसागर सो तारि कर, लें जावे बहु जीव।
साधू केवट राम के, पार मिलावें पीव ॥ ४२ ॥
सन्त मिलन को जाइये, तज माया अभिमान।
ज्यों २ पग आगे धरे, त्यों २ यज्ञ समान ॥ ४३ ॥
विधिवत यज्ञ करै सदा, जो द्विज उत्तम गोत।
साधु निकट चलि जात ही, सो फल पग २ होत ॥ ४४ ॥
दर्शन कीजे साधु का, कै गुरु का कर लेय।
जहं तहं ब्रह्महिं देखिये, दुविधा दुर्मति हेय ॥ ४५ ॥
ना सुख दारा सुत महल, ना सुख भूप भये।
साधु सुखी सहजो कहे, तृष्णा रोग गये ॥ ४६ ॥
ना सुख विद्या के पढ़े, ना सुख बाद विवाद।
साधु सुखी सहजो कहे, लागी सुन्न समाद ॥ ४७ ॥
खाली साधु न भेटिए, सुन लीजे सब कोय।
कहे कबीरा भेट धर, जो तेरे घर होय ॥ ४८ ॥

साधु मिले साहब मिले, अन्तर रही न रेख।
मनसा वाचा कर्मना, साधू साहब एक ॥ ४९ ॥

आचार

प्रभु चाहे सोई करे, ताकूँ टोके कौन।
देख २ अजरच रहा, चरणदास गह मौन ॥ १ ॥
सब रंग तेरे तैं रंगे, तू ही सब रंग माँहि।
सब रंग तेरे तैं किये, दूजा कोई नाहिं ॥ २ ॥
वैसा तो रंगरेज ना, वैसा छीपी नाहिं।
वैसा कारीगर नहीं, या दुनियाँ के माहिं ॥ ३ ॥
तुलसी या संसार में, सब से मिलिये धाय।
ना जानू काहू भेष में, नारायण मिल जाय ॥ ४ ॥
सब तज कर मोको भजे, मोही सेती प्रीति।
मैं भी उनके कर बिक्यो, यही जू मेरी रीति ॥ ५ ॥
मंन सों रहु निर्वैरता, मुख सों मीठा बोल।
तन सूँ रक्षा जीव की, चरणदास कह खोल ॥ ६ ॥
खांडा पकरे सील का, काम हने तत्काल।
शील बिना नरके परे, शील बिना बेहाल ॥ ७ ॥
आज्ञाकारी पीय की, रहे पिया के सङ्ग।
तन मन सूँ सेवा करे, और न दूजा रङ्ग ॥ ८ ॥
काटे पर कदली फले, कोटि यत्न कर सींच।
विनय न मान खगेश सुन, डाटे पै नव नीच ॥ ९ ॥
जड़ चेतन गुण दोषमय, विश्व कीन कर्तार।

सन्त हंस गुण गहत हैं, पर हरि वारि विकार ॥ १० ॥

सब जीवन सुख दीजिये, सब से मीठा बोल।
आतम पूजा कीजिये, पूजा यही अतोल ॥ ११ ॥

आशा की डोरी बन्धी, क्षण घर में क्षण द्वार।
स्थिरता नहीं सन्तोष बिनु, दुखी पिङ्गला नार ॥ १२ ॥

उड़ती देखी चील को, पंजे माहिं मांस।
बहु पक्षी घेरे फिरैं, लेन न देवें स्वांस ॥ १३ ॥

अजगर करे न चाकरी, पक्षी करे न काम।
दास मलूका यों कहैं, सब का दाता राम ॥ १४ ॥

परनारी कै आपनी, दोनों बुरी बलाय।
घर बाहर की आग ज्यों, देवें हाथ जलाय ॥ १५ ॥

शरणागत को जे तजहिं, निज अनहित अनुमानि।
ते नर पामर पापमय, तिनहिं विलोकत हानि ॥ १६ ॥

सूरा सोई पिछानिये, लड़े धर्म के हेत।
पुरजा २ कट पड़े, तब हुन छोड़े खेत ॥ १७ ॥

सन्मुख आये शत्रु को, जीत लेत धन धाम।
इतने ही में स्वर्ग सुख, होत स्वामी को काम ॥ १८ ॥

हुई गरज मन औरथा, मिटी गरज मन और।
उदयराज मन की प्रकृति, रहै न एकहि ठौर ॥ १९ ॥

तुलसी कहत पुकार के, सुनो सकल दे कान।
हेम दान गज दान से, बड़ो दान सन्मान ॥ २० ॥

धन देके तन राखिये, तन दे रखिये लाज।
तन धन दोनों दीजिये, एक प्रीति के काज ॥ २१ ॥

एक बड़ो दूजे अग्नि, भरम पोल ता माहिं।
चौथे गांठ कुबुद्धि की, याते भेदत नाहिं॥ २२॥
यथा लाभ सन्तोष सुख, रघुपति चरण सनेह।
तुलसी जो मन वश रहे, जस कानन तस गेह॥ २३॥
तन कर मन कर वचन कर, देत न काहू दुःख।
तुलसी पातक झरत है, देखत उनको मुख॥ २४॥
जो कुछ आवे सहज में, सोई मीठा जान।
कडुवा लागे नीम सा, जामे ऐंचातान॥ २५॥
राज दुलारे साधुजन, तीन वस्तु को जाय।
कै मीठा कै मान को, कै माया की चाय॥ २६॥
संस्कृत हैं कूप जल, भाषा बहता नीर।
भाषा सद्‌गुरु सहत है, सद्‌गुरु गहर गंभीर॥ २७॥
भूप दुःखी अवधू दुखी, दुखी रङ्क विपरीत।
कहैं कबीर वह सब दुखी, सुखी सन्त मन जीत॥ २८॥
परारब्ध पहले बनी, पीछे बना शरीर।
तुलसी यह आश्चर्य है, मन नहिं बांधे धीरे॥ २९॥
पण्डित केरी पोथियां, ज्यों तीतर को ज्ञान।
औरन सगुण बतावहिं, आपा फन्द न जान॥ ३०॥
सतगुरु सङ्ग सांची कथा, कोई न सुनही कान।
कलियुग पूजा दम्भ की, बाजारी को मान॥ ३१॥
ऊंचे पानी ना टिके, नीचे ही ठहराय।
नीचा होय सो भर पिये, ऊंच पियासा जाय॥ ३२॥
भेद भावना मिट गई, क्लेश भये सब दूर।

जित देखो उत ही दीखे, महादेव भरपूर ॥ ३३ ॥
रे मूरख जिन के लिये, खपता है दिन रात।
अन्त काल ना सुनेंगे, वे तेरी एक बात ॥ ३४ ॥
राग मूल संसार है, राग मिटे मिट जाय।
नाश हुए जिमि तैल के, दीपक ज्योति बिलाय ॥ ३५ ॥
दान दीन को दीजिये, मिटे दरद की पीर।
औषद् ताको दीजिये, जाके रोग शरीर ॥ ३६ ॥
दादू आदर भाव का, मीठा लागे मोठ।
बिन आदर व्यञ्जन बुरा, जीमन वाला ठोठ ॥ ३७ ॥
धर्म जाता धर पलटता, त्रिया पडन्ता ताव।
ये तीनों दिन मरण के, कहा रङ्क कहा राव ॥ ३८ ॥
पाप निवारत हित करत, गुन गिन औगुन ढांक।
दुख में राखत देत कछु, सत मित्रन ये आंक ॥ ३९ ॥
इक तरु सूखे की अगनि, जारत सब बनराय।
त्यों ही पूत कुपूत में बन्श समूल नशाय ॥ ४० ॥
परमुख सेवक परिखिये, बान्धव दुख की वार।
मित्र सु आपत काल में विभव हानि में नार ॥ ४१ ॥
बात कहन की रीति में, है अन्तर अधिकाय।
एक वचन ते रिस बढ़े, एक वचन ते जाय ॥ ४२ ॥
मधुर वचन ते जात मिट, उत्तम जन अभिमान।
तनक शीत जलते मिटे, जैसे दूध उफान ॥ ४३ ॥
आवत गाली एक है, उलटत मोय अनेक।
कहे कबीर ना उलटिये, वही एक की एक ॥ ४४ ॥

बहुतन को न बिरोधिये, निबल जान बलवान।
मिल भख जाँय पिपीलिका नागहिं नगके मान ॥ ४५ ॥
ऐसी बानी बोलिये, मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे, आपहु शीतल होय ॥ ४६ ॥
बोली तो अनमोल है जो कोई जाने बोल।
हिया तराजू तोल कर, तब मुख बाहर खोल ॥ ४७ ॥
शब्द बराबर धन नहीं, जो कोई जाने बोल।
हीरा तो दामों मिले, शब्द का मोल न तोल ॥ ४८ ॥
जूआ खेलत होत है, सुख सम्पति को नास।
राज काज नल ते छुट्यो, बसे पाण्डु बनवास ॥ ४९ ॥
समय न चूके चतुर नर, कहत कवीजन कूक।
चतुरन के खटके हिये, समय चूक की हूक ॥ ५० ॥
देह विषैं बल गेह धन, जस इत पुन परलोक।
चार बचाइ इन्द्रीन के, कीजे भोग अशोक ॥ ५१ ॥
जा दिन विद्या धरम को जस को लाभ न होय।
विदुर कहैं धृतराष्ट्र ते, बन्ध्य काल है सोय ॥ ५२ ॥
आलस वैरी तन बसत, सब सुख को हर लेत।
त्यों उद्यम सों बन्धुता, किये सकल सुख देत ॥ ५३ ॥
तीनहुं राखै दृष्टि में, तीन न बिगरन देत।
तीन पिछाने विमल मति, सब को बस कर लेत ॥ ५४ ॥
कृपण जतन धनरो करे, कायर जीव जतन्न।
सूर जतन उनरो करे, जिनरा खाया अन्न ॥ ५५ ॥
ना कुछ करौं न कर सकौं, ना कछु करने योग।

तुलसी आय संसार में, भले हंसाये लेगा ॥ ५६ ॥
दादू पछतावा रहा, सके न ठोहर लाय।
अरथ न आया राम के, यह तन यों ही जाय ॥ ५७ ॥
जाको रक्खे साइयां, मार न सके कोय।
बाल न बांका कर सके, जो जग बैरी होय ॥ ५८ ॥
जेती लहर समुद्र की, तेती मन की दौड़।
सहजो हीरा नीपजे, जो मन आवे ठौर ॥ ५९ ॥
दौड़त दौड़त दौड़ियां जहं लग मन की दौड़।
दौड़ थकी मन थिर भया, वस्तु ठौर की ठौर ॥ ६० ॥
पढ़ना गुनना चातुरो, यह तो बात सहल।
कामदहन मन वश करन, गगन चढ़न मुशकल ॥ ६१ ॥
नाम भजो मन वश करो, यही बात है तन्त।
काहे को पढ़ पच मरयो, कोटिन ज्ञान ग्रन्थ ॥ ६२ ॥
अपने उरझे उरझियां, दीखे सब संसार।
अपने सुरझे सुरझियां, यह गुरु ज्ञान विचार ॥ ६३ ॥
मन दाता मन लालची, मन राजा मन रंक।
जो यह मन गुरु से मिले, तो गुरु मिले निशङ्क ॥ ६४ ॥
मन के बहुते रङ्ग हैं, छिन छिन बदलें सोय।
एक रङ्ग में जो रहे, ऐसा बिरला कोय ॥ ६५ ॥
कोटि करम पल में करे, यह मन बिषयास्वाद।
सत्गुरु शब्द न मानहीं, जन्म गंवाये बाद ॥ ६६ ॥
तन को योगी सब करें, मन को करे न कोय।
सहजै सब सिध पाइये, जो मन योगी होय ॥ ६७ ॥

मन ही अपना शत्रु है, मन ही अपना मित्त।
संसारी मन शत्रु है, परमारथ रत मित्त ॥ ६८ ॥

दुनियाँ स्वप्न समान यह, क्या भरमा मन देख।
आंख खुले कछु है नहीं, उपजे ज्योंहि विवेक ॥ ६९ ॥

घायल ऊपर घाव ले, टोटे त्यागी होय।
भरि योवन में शीलवन्त, कोई विरला होय तो होय ॥ ७० ॥

ज्ञानी ध्यानी संयमी, दाता सूर अनेक।
जपिया तपियां बहुत हैं, शीलवन्त कोई एक ॥ ७१ ॥

मांगन मरन समान है, मत मांगो कोई भीख।
मांगन ते मरना भला, यह सत्गुरु की सीख ॥ ७२ ॥

कोटि करम लागे रहैं, एक क्रोध की लार।
किया कराया सब गया, जब आया अहंकार ॥ ७३ ॥

साध सन्तोषी सर्वदा, निर्मल जिनके बैन।
तिनके दर्शन परस ते, जिय उपजै सुख चैन ॥ ७४ ॥

छाया माया एकसी, बिरला जाने कोय।
भगतां के पीछे लगी, सन्मुख भागे सोय ॥ ७५ ॥

आँधी आई प्रेम की, ढई भरम की भीत।
माया टाटी उड़ गई, लगी नाम सों प्रीति ॥ ७६ ॥

मूरख के समझावते, ज्ञान गांठ का जाय।
कोयला होय न ऊजरा, सौ मन साबुन लाय ॥ ७७ ॥

परनारी के राचने, सीधा नरक को जाय।
तिन को यम छांडे नहीं, कोटिन करे उपाय ॥ ७८ ॥

परनारी पैनी छुरी, मति कोई करो प्रसङ्ग।

दस मस्तक रावण गये, परनारी के सङ्ग ॥ ७६ ॥
यार बुलावे भाव से, मो पै गया न जाय।
धन मेली पिय ऊजरा, लाग न सककूं पाय ॥ ८० ॥
जूआ चोरी मुखबरी, व्याज घूँस परनार।
जो चाहे दीदार को, एती वस्तु निवार ॥ ८१ ॥
पण्डित और मसालची, दोनों सूझे नाहिं।
औरन को करें चाँदना, आप अन्धेरे माहिं ॥ ८२ ॥
समदृष्टि सत्गुरु किया, मेरा भरम विकार।
जहं देखूं तहं एक ही, साहब का दीदार ॥ ८३ ॥
ज्ञानी मूल गंवाइयां, आप भये करता।
ताते संसारो भला, जो सदा रहे डरता ॥ ८४ ॥
कोई तो तन मन दुखी, कोई चित्त उदास।
एक एक दुःख सबन को, सुखी सन्त का दास ॥ ८५ ॥
तुलसी सम्पति के सखा, पड़त विपति में चीन्ह।
सज्जन कञ्चन कसनको, विपति कसौटी कीन्ह ॥ ८६ ॥
नीच २ सब तर तर गये, सन्त चरन लौ लीन।
जाति के अभिमान से, डूबे बहुत कुलीन ॥ ८७ ॥
ज्यों कदली के पात में, पात पात में पात।
त्यों चतुरन की बात में, बात बात में बात ॥ ८८ ॥
सरस कविन के हृदय को, बेधत ह्वै सो कौन।
असमझवार, सराहिबो, समझवार की मौन ॥ ८९ ॥
ऊजड़ खेड़ा फिर बसे, निरधनियां धन होय।
बीता दिन नहीं बाहुड़े, मुवा न जीवे कोय ॥ ९० ॥

नाच कूद मद पीवते, घर घर होते राग।
ते मन्दिर खाली पड़े, बैठन लागे काग ॥ ९१ ॥
हंस सरोवर ना तजो, जो जल खारो होय।
डाबर डाबर डोलता, भलो न कहसी कोय ॥ ९२ ॥
कहाँ हेमन्त शीतल भयो, हरे रूख जल जांय।
ताते तो ग्रीष्म भलो, जरे हरे ही जांय ॥ ९३ ॥
गज मुख ते तन्दुल गिरयो, घटयो न तासु अहार।
सो ले चली पिपीलिका, पालन को परिवार ॥ ९४ ॥
द्रुति पुट घट सम अज्ञ जन, मेघ समान सुजान।
पढ़ें वेद इहि हेतु तैं, ज्ञानी पै तजि आन ॥ ९५ ॥
जग रचना सब झूठी है, झूठा सब व्यवहार।
भक्ति करो तो भव तरो, यही वेद का सार ॥ ९६ ॥
यह दिन गये अकार्थी, संगत भई न सन्त।
प्रेम बिना पशु जीवना, भक्ति बिना भगवन्त ॥ ९७ ॥
चतुराई चूल्हे परो, भट्टी परे अचार।
तुलसी हरि की भक्ति बिन, चारों वर्ण चमार ॥ ९८ ॥
परमानन्द कृपायतन, मन परि पूरित काम।
प्रेम भक्ति अनपायिनी, देहु हमहिं श्रीराम ॥ ९९ ॥
यदपि प्रथम दुख पावही, रोवै बाल अधीर।
व्याधि नाश हित जननी, गिनै न सो शिशु पीर ॥ १०० ॥
रचनहार को चीन्हले, खाने को क्या रोय।
दिल मन्दिर में बैठ कर, तान डुपट्टा सोय ॥ १०१ ॥
कबीर रोड़ा हो रह बाट का, तज मन का अभिमान।

ऐसा जो कोई दास हो, ताहि मिले भगवान ॥ १०२ ॥
रोड़ा हुआ तो क्या हुआ, पक्षियों को दुख देय।
हरि जन ऐसा चाहिये, ज्यों धरनी की खेय ॥ १०३ ॥
खेह हुई तो क्या हुवा, उड़ २ लागे अङ्ग।
हरि जन ऐसा चाहिये, ज्यों पानी सरवङ्ग ॥ १०४ ॥
पानी हुआ तो क्या हुआ, तत्ता शीरा होय।
हरि जन ऐसा चाहिये. जैसा हरि ही होय ॥ १०५ ॥
भक्त हमारो पग धरे, जहां धरूं मैं हाथ।
लारे लाग्यो ही फिरूं, कबहुं न छोड़ूं साथ ॥ १०६ ॥
मोको वश कियो जो चहे, भक्तन की कर सेव।
उन में ह्वैकर मैं मिलूं, करूं बहुत ही हेव ॥ १०७ ॥
मम भक्त जित २ फिरें, गवनै लागा जाऊं।
जहाँ तहां रक्षा करूं, भक्त वछल मेरो नाऊं ॥ १०८ ॥
मेरे जन मोमें रहें, मैं भक्तन के मांहि।
मेरे अरु मम सन्त में, कछु भी अन्तर नाहिं ॥ १०९ ॥
पुरुष नपुँसक नारि नर, जीव चराचर कोय।
सर्व भाव भज कपट तज, मोहि परम प्रिय सोय ॥ ११० ॥
व्यापक सकल अनीह अज, निर्गुण नाम न रूप।
भक्ति हेतु नाना विधहिं, करत चरित्र अनूप ॥ १११ ॥
विद्या धन कुल रूप मद, प्रभूता यौवन नारि।
ये बाधक हरि भक्त के, कहें बुधि वेद विचारि ॥ ११२ ॥
भक्ति भाव को छोड़कर, करी दम्भ की हाट।
मुक्ति पन्थ को तज दिया, लई नरक की बाट ॥ ११३ ॥

भक्त संग छोड़ो नहीं, सदा रहत नित पास।
जहाँ न आदर भक्त को, तहां न मेरा बास ॥ ११४ ॥
निराकार निर्गुण प्रभु, तदपि सगुण धरे देह।
करत रहत नाना चरित, केवल भक्त सनेह ॥ ११५ ॥
निज मुखते भाष्यो यही, भक्ति अति ही प्रिय मोय।
भक्त वचन उलंघो नहीं, अविहित विहित जो होय ॥ ११६ ॥
रावणारि यश पावन, गावहिं सुनहिं जे लोग।
राम भक्ति दृढ़ पावहिं, विन वैराग्य जप योग ॥ ११७ ॥
यह सो भक्ति आलिगिंनी, बिरला जाने भेव।
भाग होय तो पाइये, समझावे गुरुदेव ॥ ११८ ॥
झूठे सुख को सुख कहे, मानत है मन मोद।
जगत चबेना काल का, कुछ मुख में कुछ गोद ॥ ११९ ॥
पाव पलक की सुध नहीं, करे काल का साज।
काल अचानक मारसी, ज्यों तीतर को बाज ॥ १२० ॥
आये हैं सो जांयगे, राजा रङ्क फकीर।
एक सिंहासन चढ़ चले, इक बांधे जात ज़ंजीर ॥ १२१ ॥
दुर्लभ मानुष जन्म है' देह न बारम्बार।
तरुवर से पत्ता झड़े, बहुर न लागे डार ॥ १२२ ॥
देह धरे का गुण यही, देह २ कुछ देह।
कहे कबीरा देह तू, जब लग तेरी देह ॥ १२३ ॥
देह खेह हो जायगी, फिर कौन कहेगा देह।
निश्चय कर उपकार ही, जीवन का फल येह ॥ १२४ ॥
या दुनिया में आय के, छाँडि देय तू ऐंठ।

लेना होय सो लेय ले, उठी जात है पैंठ ॥ १२५ ॥
नानक नन्हा हो रहो, जैसी नन्हीं दूब।
बड़ी घास जल जायगी, दूब खूब की खूब ॥ १२६ ॥
कबीर आप ठगाइये, और न ठगिये कोय।
आप ठगे सुख ऊपजे, और ठगे दुख होय ॥ १२७ ॥
जन्म मरण दुख याद कर, कूड़े काम निवार।
जिन २ पन्थों चालना, सोई २ पन्थ संवार ॥ १२८ ॥
कबीर खेत किसान का, मिरगों खाया झाड़।
खेत बिचारा क्या करे, जो धनी करे नहिं बाड़ ॥ १२९ ॥
जेहि घट प्रीति न प्रेम रस, पुनि रसना नहिं नाम।
ते नर पशु संसार में, उपज मरे बेकाम ॥ १३० ॥
तुलसी या संसार में, पांच रत्न हैं सार।
सन्त मिलन अरु हरि भजन, दया दीन उपकार ॥ १३१ ॥
काम क्रोध मद लोभ की, जब लग मन में खान।
तुलसी पण्डित मूरखा, दोनों एक समान ॥ १३२ ॥
निज अवगुण गुण राम के, समझे तुलसीदास।
होय भलो कलिकाल में, उभय लोक अनियास ॥ १३३ ॥
आंख कान मुख मूंद कर, नाम निरञ्जन लेय।
अन्दर के पट जब खुलें, बाहर के पट देय ॥ १३४ ॥
जो तोकूँ काँटा बुवे, ताहि बोय तू फूल।
तोकों फूल के फूल हैं, वाको हैं तिरशूल ॥ १३५ ॥
तेरे भांवे कछु करो, भलो बुरो संसार।
नारायण तू बैठ के, अपनो भवन बुहार ॥ १३६ ॥

तनिक बड़ाई पाय के, मन में अधिक ग़रूर।
नारायण जिन बैठ मग, साहब का घर दूर ॥ १३७ ॥
चात्रिक सुतहिं पढ़वहीं, आननीर मत लेय।
मम कुल ये ही रीति है, स्वाँति बूंद चित्त देय ॥ १३८ ॥
जा मरने से जग डरे, मेरे मन आनन्द।
कब मरहूं कब पायहूं, पूरण परमानन्द ॥ १३९ ॥
धीरे २ रे मना, धरे सब कुछ होय।
माली सींचे केवड़ा, ऋतु आये फल होय ॥ १४० ॥
जहां दया तहं धर्म है, जहां लोभ तहां पाप।
जहां क्रोध तहां काल है, जहाँ क्षमा तहाँ आप ॥ १४१ ॥
अमृत भरे तन मन वचन, निशि दिन परउपकार।
परगुण मानत मेरु सम, बिरलै जन संसार ॥ १४२ ॥
सरस्वती के भण्डार की, बड़ी अपूरव बात।
ज्यों खरचे त्यों २ बढ़े, बिन खरचे घट जात ॥ १४३ ॥
आप बुरो जग है बुरो, भलो भले जग मान।
तजत बहेरा छाँह सब, गहत आम की आन ॥ १४४ ॥
सेवक सोई जानिये, देत विपति में सङ्ग।
तन छाया ज्यों धूप में, रहे साथ इक रङ्ग ॥ १४५ ॥
सब से लघु है मांगिबो, यामें फेर न सार।
बलिपै जांचत ही भये, बावन तन करतार ॥ १४६ ॥
ज़शवंत वास सराय का, क्या सोवे भर नैन।
स्वाँस नगारे कूंच के, बाजत हैं दिन रैन ॥ १४७ ॥
उठ फरीदा जाग रे; जागन की कर चौंप।

ये दम हीरालाल है, गिन गिन हरि को सौंप ॥ १४८ ॥

सब से मीठा बोलना, करना पर उपकार।
नरायण या जगत में, यह दो बातें सार ॥ १४९ ॥

सम्मन रोवै कौन को, हंसे सो कौन विचार।
गये सो आवन के नहीं, रहे सो जावनहार ॥ १५० ॥

जो जाके शरने बसे, ताकी वाको लाज।
जल सौंहीं मछली चढ़े, बहे जांय गजराज ॥ १५१ ॥

देख पराई चोपड़ी, मत ललचावे जीव।
रूखी सूखी खाय के, ठण्डा पानी पीव ॥ १५२ ॥

गोधन गजधन वाजिधन, और रत्न धन खान।
जब आवे सन्तोष धन, सब ये धूरि समान ॥ १५३ ॥

गिरिये पर्वत शिखर ते, परिये धरण मंझार।
दुष्ट संग नहिं कीजिये, डोबे कालीधार ॥ १५४ ॥

पपिहा प्रण को ना तजे, तजे तो तन बेकाज।
तन छूटे तो कछु नहीं, प्रण छूटे है लाज ॥ १५५ ॥

चोट सुहेली सेल की, लागत लेत उसांस।
चोट सहारे शब्द की, तासु गुरु मैं दास ॥ १५६ ॥

तुलसी मीठे वचन से, सुख उपजे चहुं ओर।
वशीकरण यह मन्त्र है, तज दे बचन कठोर ॥ १५७ ॥

तू तू कहता तू हुआ, मुझ में रही न हूं।
जब आपा परका मिटा, जहां देखू तहाँ तूँ ॥ १५८ ॥

आयो प्रभु शरणागति, कृपा सिन्धु दयाल।
एक अक्षर हरि मन बसे, नानक होत निहाल ॥ १५९ ॥

माया सगी न मन सगा, सगा न यह संसार।
परशुराम या जीव को, सगा सो सिरजनहार ॥ १६० ॥
जननी जने तो भक्त जन, कै दाता कै शूर।
नाहीं तो तू बाँझ रह, काहे गंवावे नूर ॥ १६१ ॥
मैं २ बड़ी बलाय है, सको तो निकसो भाग।
कहे कबीर कब लग रहे, रूई लपेटी आग ॥ १६२ ॥
निष्काम बुद्धि बिमल हो, कीरति होउ अडिग्ग।
प्रेम भक्ति दृढ़ हिय बसो, सदा प्रभू हो ढिग्ग ॥ १६३ ॥
पड़ा पपीहा सुरसरी, लगा बधिक का बान।
मुख मूंदे श्रति गगन में, निकस गये यों प्राण ॥ १६४ ॥
कबीर चकई निस बिसरे, आन मिले प्रभात।
जो जन बिछुरे राम से, दिवस मिले नहिं रात ॥ १६५ ॥
मकड़ी उतरे तार से, पुन गह चढ़त सुतार।
जाका जासों मन रम्यो, पहुंचत लगे न बार ॥ १६६ ॥
नीच २ सब तर गये, सन्त चरण लौ लीन।
जातिहि के अभिमान से, डूबे बहुत कुलीन ॥ १६७ ॥
कबीर मरत २ जग मुआ, मरन न जाना कोय।
ऐसी मरनी जो मरे, फेर, न मरना होय ॥ १६८ ॥
मर जाऊं मांगूं नहीं, निज स्वारथ के काज।
परमारथ के कारने, मोहे न आवे लाज ॥ १६९ ॥
सोना काई ना लगे, रूपा घुन नहीं खाय।
बुरा भला गुरु भक्त जो, कबहुं नरक नहिं जाय ॥ १७० ॥
चोरी हिंसा परत्रिया, निन्दा मिथ्या गाल।

क्रोध ईर्षा, मान छल, मन वच तन से टाल ॥ १७१ ॥
तृष्णा चिन्ता दीनता, माया ममता नार।
ये षट डाकिन पुरुष को, पीवत खून निकार ॥ १७२ ॥
शान्ति दया समता क्षमा, मुदिता विद्या प्रीति।
ये जननी सम पुरुष की, रक्षा करें सुनीति ॥ १७३ ॥
पतित उधारन भय हरन, हरी नाथ के नाथ।
नानक ताहि पिछानिये, सदा बसत तुम साथ ॥ १७४ ॥
कबीर जग में बैरी कोउ नहीं, जो मन शीतल होय।
यह आपा तू डार दे, दया करे सब कोय ॥ १७५ ॥
चिन्ता ताकी कीजिए, जो अनहोनी होय।
यह मारग संसार को, नानक थिर नहिं कोय ॥ १७६ ॥
मारग चलते जो गिरे, ताको नाहीं दोष।
कहे कबीर बैठा रहै, ता सिर करड़े कोस ॥ १७७ ॥
पपीहा का प्रण देख के, धीरज रहे न रञ्ज।
मरते दम जल में पड़ा, तोउ न बोरी चुञ्च ॥ १७८ ॥
पतिव्रता पति को भजे, ताहि न और सुहाय।
सिंह बच्चा जो लङ्घना, तो भी घास न खाय ॥ १७९ ॥
दास दुखी तो मैं दुखी, आदि अन्त तिहुंकाल।
पलक एक में प्रगट हो, छिन में करूं निहाल ॥ १८० ॥
यथा अनेकन भेष धरि, नृत्य करे नट कोई।
सोई २ भाव दिखावही, आपुन होय न सोई ॥ १८२ ॥
जिन की आशा करत हैं, स्वर्ग माहिं सब देव।
कबहूं दर्शन पाय हैं, चरण कमल की सेव ॥ १८२ ॥

रहता है सर्वत्र ही, व्यापक एक समान।
पर निज भक्तों के लिये छोटा है भगवान ॥ १८३ ॥
बहुत निबल मिल बल करैं, करे जु चाहैं सोय।
तिनकन की रसरी करी, करी निबन्धन होय ॥ १८४ ॥

चौपाई

छोटा बडा कहें जो कुछ हम। फबता है सब तुझे महत्तम।
गुड़ सा मीठा है भगवान। बाहर भीतर एक समान ॥
किस का ध्यान करूं सविवेक। जल तरंग से हैं हम एक ॥

दोहा

भवसागर से तरन का, सीधा यही उपाव।
महादेव के भजन में, चित्त मगन हो जाव ॥ १ ॥
शङ्कर सिन्धु अगाध में, नाना दृश्य तरंग।
क्षण भर में होवे उदय, क्षण में होवे भंग ॥ २ ॥
दर्पण में भापे जिमि, नगर बहुत बिस्तार।
शंकर में भापै तिमि, अनहोना संसार ॥ ३ ॥
ओत प्रोत शिव सबन में, ज्यों कपड़े में सूत।
जो उस को जाने नहीं, सो नर बड़ा कपूत ॥ ४ ॥
जिमि रज्जू अज्ञान से, भाषत काल भुजंग।
जीव हुआ भावै तिमि, आतम देव असंग ॥ ५ ॥
अजर अमर निश्चल अकल, सकल कलपना हीन।
निराकार निर्विकार है, व्यापक इन्द्रि बिहीन ॥ ६ ॥
मैं मेरी जब से मिटी, हटा मोह का फन्द।

जित देखे उतही दिखे, पूरण परमानन्द ॥ ७ ॥
महादेव अवगुण भवन, विष्णु सकल गुणधाम।
जेहि कर्मन रम जाहि सन, नाहि ताहि सन काम ॥ ८ ॥

पद

'प्रज्ञानमानन्दं ब्रह्म,' ऐसो ऋगवेद कहे।
'अहंब्रह्म अस्मि' इति, यजुर्वेद यूँ कहे ॥
'तत्त्वमसि' इति सामवेद, यूँ बखानत है।
'अयं आत्मा ब्रह्म' कहि, अथर्वण यूं लहे है ॥ १ ॥

सोरठा

कुन्द इन्दु सम देह, उमा रमण करुणा अयन।
जाहि दीन पर नेह, करहु कृपा मर्दन मयन ॥ १ ॥
मूक होय बाचाल, पंगु चढ़े गिरवर गहन।
जासु कृपासु दयालु, द्रवौ सकल कलिमल दहन॥ २ ॥
वदौं पवन कुमार, खल वन पावक ज्ञान घन।
जासु हृदय आगार, बसहिं राम शर चाप धर ॥ ३ ॥

सवैया

परम पवित्र तुम मित्र हो हमारे ऊधो,
अन्तर विथा की कथा मेरी सुन लीजिये।
ब्रज की वे बाला जपैं मेरी जयमाला,
बढ़ी बिरह की ज्वाला तामें तन मन छीजिए ॥
मेरो विश्वास मेरी आश, रस रास मेरी,
मिलवे की प्यास जान सावधान कीजिये।

प्रीति सूँ प्रतीति सूँ लिखी है रस रीति सूं,
सो पत्रिका हमारी प्राण प्यारिन कूं दीजिए ॥

कवित्त

दास तो तिहारे जो उदास तो तिहारे,
दूर पास तो तिहारे आमखास तो तिहारे हैं।
दीन तो तिहारे मतिहीन तो तिहारे,
जो नवीन तो तिहारे प्राचीन तो तिहारे हैं ॥
क्रूर तो तिहारे गुण पूर तो तिहारे,
राचे नूर तो तिहारे सांचे शूर तो तिहारें हैं।
भायक तिहारे यश गायक तिहारे,
हो सहायक हमारे हम पायक तिहारें हैं ॥

सवैया

निशि वासर प्रेम के पन्थ चले,
हिय ते हरि नाम विसारे नहीं।
यदि वृद्धिय देखि के एक घरी,
धरका जिय में कछु धारे नहीं ॥
विधि को विश्वास "ओंकार" कहै,
अपनो बल बुद्धि बिसारे नहीं।
वही मानस की बड़ी किम्मत है,
जो समय पर हिम्मत हारे नहीं ॥

कवित्त

सामिल है पीर में शरीर में न राखे भेद,

अन्तर कपट कछु होय तो उघरि जात।
ऐसो ठाठ ठाने जाते बिना जन्त्र मन्त्रन ते,
साँपहुं को जहर उतारे तो उतर जात॥
ठाकुर कहत यामें कठिन न मानो कछु,
हिम्मत किये ते कौन काज न सुधर जात।
चारि जने चार ही दिशा ते चारि कोन गही,
मेरु को हिलायें औ उखारें तो उखर जात॥

सवैया

घूमत द्वार मतङ्ग अनेक,
जंजीर जरे मद अम्बु चुआते।
तीखे तुरङ्ग मनो गति चञ्चल,
पौन की गौनहुं को जो लजाते॥
भीतर चन्द्रमुखी अवलोकत,
बाहर भूप खरे न समाते।
ऐसे भये तो कहा "तुलसी" जो,
पै जानकीनाथ के रङ्ग न राते॥

छप्पय

कबहुंक खग मृग मीन, कबहुं मरकट तनु धरके।
कबहुंक सुर नर असुर, नाग मैं आकृति करके॥
नटवत लख चौरासी, स्वांग धरि २ मैं आयो।
हे त्रिभुवन के नाथ, रीझ कर कछू न पायो॥
जो हो प्रसन्न तो देहु अब, मुक्ति दान माँगू विहंस।
जोपै उदास तो कहहु इम, मत धररे नर स्वांग अस॥

कवित्त

एक स्वांस खाली मत खोय लो खलक बीच,
कीचरु कलङ्क अङ्क धोयले तो धोयले।
उर अन्धियार पाप पुर सों भरयो है तामें,
ज्ञान की चिरागें चित्त जोयले तो जोयले॥
मिनषा जन्म वार २ न मिलेगी मूढ़,
पूर्ण प्रभु से प्यारो होयले तो होयले।
देह क्षणभंगुर यामें जन्म सुधारबो सो,
वीज के झमक्के मोती पोयले तो पोयले॥ १॥

दाता हु महीप मानधाता हु दिलीप जैसे,
जाके यश अजहूं लौं द्वीप २ छाये हैं।
बली ऐसो बलवान को भयो जहान बिच,
रावण समान को प्रतापी जग जाये हैं॥
बाण की कलान में सुजान द्रोण पारथ से,
जाके गुण दीनदयाल भारत में गाये हैं।
कैसे २ शूर रचे चातुर बिरञ्चजू ने,
फेर चकचूर कर धूर में मिलाये हैं॥ २॥

पद।

जिसका कोई न होय हृदय से उसे लगावे,
प्राणीमात्र के लिये प्रेम की ज्योति जगावे।
सब में विभु को व्याप्त जान सबको अपनावे,
है बस ऐसा वही भक्त की पदवी पावे॥ १॥

चोरी हिंसा और व्यभिचार, काया के त्रिय दोष विचार।
निन्दा अरु कटुवाद असत्य, वाणी के यह दूषण सत्य॥
तृष्णा द्वेष बुद्धि अरु क्रोध, त्रिविधि प्रकार तू मन को शोध।
इहि प्रकार नव दूषण त्याग, कर सत्सङ्ग खुलेंगे भाग॥

को याचिये शम्भू तज आन॥ टेक॥
दीनदयाल भक्त आरत हर, सब प्रकार समरथ भगवान॥
दारुण दनुज जगत दुःखदायक, जारयो त्रिपुर एक ही बान॥
काल कूट ज्वर जरत सुरासर, निजपन लाग कियो विषपान॥
सेवत सुलभ उदार कलपतरु, पारवती पति परम सुजान।
देहु काम रिपु रामचरण रति, तुलसीदास कहे कृपा निधान॥

टेक–शिव शिव रटत मन आनन्द॥
जाके सुमरत विघ्न विनशत, कटत यम को फन्द।
तीन नेत्र विशाल झलकत, तिलक माथे चन्द॥ १॥
ओढ़ना बाघम्बरा सिव, भणत छवि मकरन्द।
भूत प्रेत बिताल जङ्गम, लिये फिरे शिव सङ्ग॥ २॥
वृषभ बाहन रुचि धतूरा, भोगता विष भङ्ग।
पारवति पति शरण की गति सूर मन आनन्द॥ ३॥

कवित्त

कोऊ तो कहत ब्रह्म नाभि के कमल मध्य,
कोऊ तो कहत ब्रह्म हृदय में प्रकाश है।
कोऊ तो कहत कण्ठ नासिका के अग्र भाग,
कोऊ तो कहत ब्रह्म भृकुटी में बास है॥

कोऊ तो कहत ब्रह्म दशवें द्वार बिच,
कोऊ तो कहत भंवर गुफा में निवास है।
पिण्ड में ब्रह्माण्ड में निरन्तर बिराजे ब्रह्म,
सुन्दर अखण्ड जैसे व्यापक आकाश है ॥ १ ॥

सवैया

काम ही न क्रोध जाके लोभ ही न मोह जाके,
मद ही न मत्सर न कोऊ न विकारी है।
दुःख ही न सुख माने पाप ही न पुण्य जाने,
हर्ष न शोक आने देह ही तें न्यारो है ॥
निन्दा न प्रशंसा करै राग ही न द्वेष धरै,
लेन ही न देन जाके, कछु न पसारो है।
सुन्दर कहत ताकी अगम अगाध मति,
ऐसा कोऊ साधु सो तो रामजी कूं प्यारो है ॥ १
प्रथम सुयश लेत शील हू सन्तोष लेत,
क्षमा दया धर्म लेत पाप से डरतु है।
इन्द्रिय कूं घेरी लेत मन ही कूँ फेरि लेत,
योगकि युगति लेत ध्यान ही धरतु है ॥
गुरु को बचन लेत हरि जी को नाम लेत,
आत्मा को शोधि लेत भवजल तरतु है।
सुन्दर कहत जग सन्त कछु देत नाहिं,
सन्त जन निशि दिन लेबो ही करतु है ॥ २ ॥
साँचो उपदेश देत भलि २ सीख देत,
समता सुबुद्धि देत कुमति हरतु है।

मारग दिखाय देत भावहुं भगति देत,
प्रेम की प्रतीत देत अमरा भरतु है॥
ज्ञान देत ध्यान देत आतम विचार देत,
ब्रह्म कूं बताय देत ब्रह्म में चरतु है।
सुन्दर कहत जग सन्त कछु लेत नाहिं,
सन्त जन निशि दिन देबो ही करत है॥ ३॥

मेरी देह मेरी गेह मेरो परिवार सब,
मेरो धन माल मैं तो बहुविधि भारो हूं।
मेरे सब सेवक हुकम्म कोऊ मेटे नाहीं,
मेरी युवति को मैं तो अधिक पियारो हूं॥
मेरो बन्श ऊंचो मेरे बाप दादा ऐसे भए,
करत बड़ाई मैं तो जगत उजारो हूं।
सुन्दर कहत मेरो मेरो ही जाने शठ,
ऐसो नहीं जाने मैं तो काल ही को चारो हूं॥ ४॥

कवित्त

ब्रह्म तो वही है जौन सचिदानन्द घन,
निर्विकार निर्विकलप नित्य ही प्रकाशै है।
माया तो वही है जौन रज तम सत गुण,
धरे नाना नाम रूप जिनके बिनाशै है॥
ईश्वर तो वही है निज रूप को न भूले कभी,
माया गहे माया सो पृथक उजासे है।
जीव तो वही है जो अविद्या को संयोग पाय,
भूले निज रूप भ्रम फांस ना निकासै है॥ १॥

जाको शुद्ध हियो ताको अनुभव तुम्हारो होत,
नाथ निज तेज ही से मायागुण नासी है।
जगत के व्यापी निज जापी को प्रतापी करो,
नाम रूप आपके अनन्त दिव्य भासी है॥
आप के समान नहीं अधिक कहां ते होय,
अहङ्कार क्षार होत, ध्याये मुदराशी है।
काल त्रास नासी तत्काल कर निहाल दैत,
राजे रघुराज जैसे अवध विलासी हैं॥ २॥
आदि है न अन्त है अगम रूप अज महापावन,
प्रसङ्ग औ अलख प्रमाण अप्रमाण है।
एक है प्रकाश है पूरण महाकाश,
विभु निर्गुण निरञ्जन है चिदानन्द ज्ञान है।
नित्य है अमर अविनाशी औ अजर सदा,
अव्यक्त निर्विकल्पअरु अवाच्य निर्वान है।
विश्व को कर्तार शब्द ओंकार है वेदरूप,
पुराण पुरुष विभु एक भगवान है॥ ३॥
मोर मुकट वारो धरै भेष नट वारो,
छोटी लोल लट वारो जगत उजारो है।
सांवरे वर्ण वारो मुरली धरन वारो,
संकट हरन वारो नन्दजू को प्यारो है॥
दानव दलन वारो छवि को छलन वारो,
मटक चलन वारो भृगुलता लक्ष वारो है।
कंस को दलन वारो भृगुलता लक्ष वारो,

मोर पङ्खवारो रखवारो सो हमारो है ॥ ४ ॥

चेतावनी ।

जो यह निर्गुण ध्यान नहीं है, तो सगुण ईश कर मनको थाम ।
सगुण उपासना हूं नहि है, तो करि निष्काम करम भज राम ॥
जो निष्काम कर्म नहिं है, तो करिये शुभ कर्म सकाम ॥
जो सकाम कर्म हू नहीं होवे, तो शठ वार वार मर जाम ॥

दोहे ।

होतो तो रहतो नहीं, जरतो वाके सङ्ग ।
प्रीति पुरानी कारने, भस्म भुवावत अङ्ग ॥ १ ॥
होतो तो रहतो नहीं, जलतो वाकें संग ।
कपट प्रीति के कारणे, भस्म रमावत अंग ॥ २ ॥

छप्पय

तृण जो दन्त पर धरहिं, तिनहिं मारत न सबल कोई ।
हम नित प्रति तृण चरहिं, बैन उच्चरहिं दीन होई ॥
हिन्दूहिं मधुर न देहिं, कटुक तुरकन न पिलावहिं ।
पय विशुद्ध अति स्रवहिं, बच्छ महिथम्बन जावहिं ॥
सुन शाह अक्बर, अरज यह, करत गौ जोरे करन ।
सो कौन चूक मोहि मारियत, मुये चाम सेवहुं चरन ॥

कवित्त

गोबिन्द के कीये जीव जात हैं रसातल को,
गुरु उपदेश सो तो छूटे जम फन्द ते ।
गोविन्द के कीये जीव वश परे कर्मन के,

गुरु के निवाज सूँ ते फिरत स्वच्छन्दते ॥
गोविन्द के कीये जीव डूबत भवसागर में,
सुन्दर कहत गुरु काढ़े दुःख द्वन्द ते।
और हू कहां लोक जू मुख से बनाय कहूं,
गुरु की तो महिमा अधिक गोविन्द ते॥

छन्द।

राम है मातु पितु सुत बन्धु, वही संगी सखा गुरु राम सनेही।
राम को मोय भरोसो है राम को, रंगी रुच राखो न कोही॥
जीवत राम है मुये पुन राम, राम सदा रघुनाथ की गति जेही।
सोई जिये जग में तुलसी, न तो डोलत और मुये धर देही॥

कुण्डलियां।

पृथ्वी पवन आकाश है, नीर अग्नि शशि भान।
कपोत गुरु अजगर लख्यो, और सिन्धु को जान॥
और सिन्धु को जान, पतङ्गो भंवरा कहिये।
माखी हाथी मृग मीन, अरु पिंगला लहिये॥
चिल्ह बाल कन्या कहूं, तीर बनावहार।
सांप माकरी भृंग ज्यो, चौबीसों उरधार॥

कवित्त

मैं तो हूं पतित आप पावन पतित नाथ,
पावन पतित हो तो पातक हरोहिगे।
मैं तो महादीन आप दीनबन्धु दीनानाथ,
दीन बन्धु हो तो दया जिय में धरोहिगे॥

मैं तो हूं गरीब आप तारक गरीबन के,
तारक गरीब हो तो बिरद बरोहिगे।
मेरी करणी पै कछु मुकुर न कीजे कान्ह,
करुणानिधान हो तो करुणा करोहिगे ॥ १ ॥

कैसे तुम गणिका के अवगुण ना गिने नाथ,
कैसे तुम भीलनी के झूठे बेर खाये हो।
कैसे तुम द्वारिका में द्रौपदी की टेर सुनी,
कैसे तुम गज के काज नंगे पग धाये हो॥
कैसे तुम सुदामा के छिन में दरिद्र हरे,
कैसे तुम उग्रसेन बन्दी ते छुड़ाये हो।
मेरी बेर एती देर कान मूँद रहे नाथ,
दीनबन्धु दीनानाथ काहे को कहाये हो ॥ २ ॥
गिरि को उठाय व्रज गोप को बचाय लियो,
अनल ते उबारो पुन बालक मंझारी को।
गज की अरज सुन ग्राह ते छुड़ाय लीनो,
राख्यो व्रत नेम धर्म पाण्डवन की नारी को॥
राख्यो गज घन्ट तले बालक बिहंगम को,
राख्यो प्रण भारत में भीष्म ब्रह्मचारी को।
त्रिविध दुखहारी निज सन्तन सुखकारी,
एक मोहे तो भरोसा भारी ऐसे गिरधारी को ॥३

स्वाँस के भरोसे गठ माँस में निवास कियो,
आशा मन माहीं राखी मानन शरीरां की।

बड़े २ शूरबीर देख छोड़ गये मूरख,
    रही ना निशानी जग शाहां ओ वज़ीरां की ॥
भज दुःखभञ्जन निरञ्जन को रेरे मूढ़,
    नित्य रोज सुधले जो पाहरन में कीरां की ।
कहे कवि धारामल सुमिरन की यही पल,
    एक २ घड़ी जात लाख २ हीरां की ॥ ४ ॥

दीनता को त्याग नर अपना स्वरूप देख,
    तू तो शुद्ध ब्रह्म अज हृदय को प्रकाशी है ।
अपने अज्ञान तैं जगत सब तू ही रचे,
    सर्व को संहार करे आप अविनाशी है ॥
मिथ्या प्रपञ्च देख दुःख निज आन जीये,
    देवन को देव तू तो सब सुख राशी है ।
जीव जग ईश होय माया से प्रभावे तू ही,
    जैसे रज्जू सांप सीप रूप है प्रभासी है ॥ ५ ॥

श्याम तन श्याम मन श्याम ही हमारो धन,
    आठों याम ऊधो यहाँ श्याम ही सों काम है ।
श्याम हीये श्याम जीये श्याम बिन नाहिं तीये,
    आंधरे की लकड़ी अधार नाम श्याम है ॥
श्याम गति श्याम रति श्याम ही प्रताप पति,
    श्याम सुखदाई से भुलाए घर धाम है ।
तुम भये बौरे यहां पाती लाये दौरे दौरे,
    योग कहाँ राखें हम रोम रोम श्याम है ॥ ६ ॥

पुरुष रतन गुण गण को सदन पुन,
पौरुष को आय तन परम प्रवीणा है।
सारी धरा को शृंगार जड़ाजड़ को सरदार,
भोग मोक्ष को भण्डार अरु चारू लखि लीना है॥
चतुर नदन को चतुर हम चीनों तब,
प्रथम जो ऐसे नर को उतपत कीना है।
ताके पाछे तत्क्षण नष्ट करे हा हा कष्ट,
इति विधि विधिनाको पण्डित न चीना है॥ ७॥

दीप में पतंग परे जरे न प्रताप जाने,
मीन से अज्ञान भये कुण्डी मिले मांस को।
गज गजी हेत परयो खात २ अंकुश को,
राग में कुरङ्ग राग करे निज नाश को॥
पङ्कज की गन्ध बीच नीच भृंग मीच गहे,
इति आदि अज्ञ नाश करें निज स्वांस को।
अहो हा सघन महा मोह को प्रताप लहा,
शुभा शुभ जानो पै न हनो भोग आश को॥ ८॥

सोम नाम विप्रवर गिरिजा के वर कर,
लीनो सुधा फल कर दीनो नरनाह के।
भूपति सुपतनी को रानी निज मीत की को,
ताने दीनों गीतकी को नीको फल चाह के॥
आगे गणिकां सरागे धरापति आगे धरा,
नरनाथ माथ धुना सुन धुना ताहि के।

हा हा कामिनी के हित हते कामिनी के अब,
ताह तजो ताहे भजो शीश शशी जाय के ॥ ६ ॥
ग्रन्थन के ज्ञाते माते मत्सर कीच बीच,
धरा नाथ मद साथ भरे दरशात हैं।
दूषण चमोंरे मोरे भूषण सुभाषण की,
पण्डित भूपाल तो न सुने मेरी बात हैं ॥
पुना आन जन्तु जेते दुखी मूढ़ दीन तेते,
मोते सकुचात हम ओते सकुचात हैं।
पात्र बिना भाषे राखे हवन को राखे तैसे,
जीरणमो गात सो तो बात होत जात हैं ॥ १० ॥

सवैया

तातका शोच न मात को शोच न शोच नहीं मोय अवध तजेको
बनवास लिएको शोच नहीं और शोच नहीं मोहि पिता मरेका
सिया हरेको शोच नहीं और शोच नहीं मोय गृद्ध मरेको।
बालि हतेको शोच नहीं और शोच नहीं मोय लङ्का जरे को ॥
लक्ष्मणमूर्छित शोच नहीं और शोच नहीं मोय विपत्ति परे का
शोच तो है इक है तुलसी मोहे भारी विभीषण पैज दिये का ॥१

बातहिं से दशरथ मरे अरु बातहिं राम फिरे बन जाई।
बातहिं से हरिश्चन्द्र सहे दुख बातहिं राज्य दियो मुनिराई ॥
रे मन बात विचार सदा कहुं बात की गात में राख सचाई।
बात ठिकाने नहीं जिनकी तिन बाप ठिकाने न जानहुं भाई ॥ २
पूरण ब्रह्म लखा जिन केवल एक अखण्ड रमा भवसारे

रूप न रेख अलेख सदा यम भाषत हैं जिनको श्रुति चारे॥
ज्ञान दिनेश चढ़ा जिनके मन मोह निशा के मिटे सब तारे।
सो गुरु हैं हमरे उरमें जिन पाप महानिधि पार उतारे॥२

एक अखण्डित ब्रह्म असङ्ग अजन्म अदृश्य अरूप अना में।
मूल अज्ञान न सूक्ष्म स्थूल समष्टि न व्यष्टि पन्थ नहीं तामें॥
ईश न सूत्र विराट न प्राज्ञ तैजस विश्व स्वरूप न जामें।
बन्ध न मोक्ष न भोग न योग नहीं कुछ वामेरु है सब वामें॥

जाग्रत में जो प्रपञ्च प्रभाषत सो सब बुद्धि विलास बन्यो है।
ज्यों सुपने में ही भोग्य न भोग तऊ एक चित्र विचित्र जन्यो है॥
लीन सुषुप्ति में मति होतई भेद भगे एक रूप सुन्यो है।
बुद्धि रच्यो जो मनोरथ मात्र सुनिश्चत बुद्धि प्रकाश बन्यो है॥

ब्रह्म निरीह निरामय निर्गुण एक निरञ्जन और न भाषे।
ब्रह्म अखण्डित है अध ऊपर बाहर भीतर ब्रह्म प्रकाशे॥
ब्रह्म ही सूक्ष्म स्थूल जहां लग ब्रह्म ही साहिब ब्रह्म ही दासे।
सुन्दर और कछू मत जानहुं ब्रह्म ही देखत ब्रह्म तमासे॥

ये सब भाव मिटे तब हीं जब कोविद की नर संगति पावे।
भाष्य शारीरक आदि पढे कठ केन कथा मति संग मिलावे॥
संयम योग समाधि करे यम नेम निरन्तर लक्ष्य बनावे।
ब्रह्म ही ब्रह्म चहुं दिश देखत या विधिते पद निर्भय पावे॥

जो फल थे तन मानव के वह लाभ किये हमने अब सारे।
आनन्द ब्रह्म सुधानिधि को लख दूर भये भव के भय भारे॥

क्षुद्र नदी सम मेट दियो वपु ब्रह्म पयोनिधि माहिं पधारे।
प्रत्यक रूप भई ममता यह पुत्र बधू अब नाहिं हमारे॥

सुत के हित प्यार करे जगमें कहो कौन करे धनके हित प्यारा।
हित नार न प्यार करे जगमें इमि ढूंढ लिया हमने भवसारा॥
हित आतम प्यार करें सब ही यह आतम है सब से अति प्यारा
वह आनन्दरूप पयोनिधि है उसके बिन और नहीं कोउ प्यारा

वसु पूरण हो वसुधा सगरी पुन और पदारथ हों सुखकारी।
गज गामिनी भामिनी हो मधुरा मुखकी छबि चन्द्रकला जिन टारी॥
शुभ व्यञ्जन होहिं अहार घने जिनके रसते तनु पुष्टि अपारी।
सुख आतम नाहिं लहें जबहीं तब होहिं हलाहल के समचारी॥१०

वह आनन्द नाह मिले धनसे और नाह मिले वह त्याग कमाये।
तन तीरथ त्याग करे न मिले न मिले हरि के पुर देह तपाये॥
घन कानन घोर निवास करे अथवा गिरिकन्दर माहिं बसाये।
रति आतम एक सुधा धन है पर जो रति नाह सुनाह सताये॥११

जिनको नित मैं चितमों चितवौ तिनकी न तोर माहिं रतीना।
वह आन पुमान की सङ्ग रती पुनि ता मनमें गणिका गृह कीना॥
धिक है अबला भृत कन्दर्प अरु मोहि धिकार जो मार अधीना।
इति रीति समूहकी प्रीति तजी नृप होय योगीश्वर ईश्वर चीना

ये श्रुति ज्ञान सुजानन के अभिमान मदादि विकार निवारे।
केचित् मोसम नीचन के चित्त में बहुमान मदादिक धारे॥
शून्य यथा मठ साधुन को अति मोक्ष को साधन दोष महारे।

सो हम से मदनातुर ओ अति काम को कारण वाम समारे ॥ १३

कवित्त

बन में रहत नित शिवरी कहत सब,
चहत टहल साधु तन न्यूनताई है।
रजनी के शेष ऋषि आश्रम प्रवेश करी,
लकरीन बोझ धरी आवै मनभाई है॥
न्याइवे को मग झारी कांकरिन बोनडारि,
वेगि उठ जाय नेकु जाति न लखाई है।
उठत सवार कहैं कौन धौं बुहारि गयो,
भयो हिये सोच कोऊ बड़ो सुखदाई है॥ १॥

बड़े ही असङ्ग वे मतंग रसरंग भरे,
धरे देखि बोझ कह्यो कौन चोर आयो है।
करे नित चोरी अहो गहो वाहि एक दिन,
बिना पाये प्रीति वाको मन भरमायो है॥
बैठे निशि चौकी देत शिष्य सब सावधान,
आय गई गहि लई कांपे तन नायो है।
देखतहि ऋषि जल धारा चली नैनन ते,
बैनन सों कह्यो जात कहा कछु पायो है॥ २॥

दीठिहूं न सौंही होत मानि तन गोत छोत,
परी जाय सोच सोत कैसे कै निकारिये।
भक्ति को प्रताप ऋषि जानत निपट नीके,

केऊ कोटि विप्रयाई यापै बारि डारिये ॥
दियो वास आश्रम में श्रवण में नाम दियो,
कियो मुनि रोष सेवा कीनी पाति न्यारिये ।
शिवरी सों कह्यो तुम राम दरशन करो,
मैं तो परलोक जात आज्ञा प्रभु पारिये ॥ ३ ॥

गुरु के वियोग हिये दारुण ले शोग दिये,
जियो नाहिं जात तोपै राम आस लागी है ।
न्यायवे के घाट निशि जात ही बुहार सब,
भई यों अबार ऋषि देखि व्यथा पागी है ॥
छ्यो गयो नेकु बहु सीभत अनेक भांति,
करिकै विवेक गयो न्हान यह भागी है ।
जलसों रुधिर भयो नाना कृमि भरि गयो,
नयो पाय शोच तऊ जाने न अभागी है ॥ ४ ॥

ल्यावे वन बेर लागी राम की औ सेर फल,
चाखे धरि राखे फेरि मीठे उन्हीं याग है ।
मारग में रहे जाइ लोचन बिछाय कभू,
आवें रघुराई दृग पावें निज भोग है ॥
ऐसे ही बहुत दिन बीते मग जोवतहिं,
आय गये औचकहि मिटे सब शोग हैं ।
जोपै तन न्यूनताई आई सुधि छीपि जाई,
पूछे आप स्योरि कहाँ ठाढ़े और लोग हैं ॥ ५ ॥

पूंछि २ आये तहाँ शिवरी स्थान जहाँ,
कहां वह भागवती देखौं दृग प्यासे हैं।
आय गई आश्रम में जानि कै पधारे आप,
दूरिहि ते साष्टाँग करी चक्षु भासे हैं॥
हबकि उठाय लई व्यथा तन दूरि गई,
नई नीर झरी नयन परे प्रेम प्यासे हैं।
बैठे सुख पाय फल खाय के सरायवेई,
कह्यो कहा कहौं मेरे मग दुःख नासे हैं॥ ६॥

करत हैं शौच सब बैठे ऋषि आश्रम,
जलको बिगार सो सुधार कैसे कीजिये।
आवत सुने हैं वन पथ रघुनाथ कहूं,
आवैं जब याको भेद भले कह दीजिए॥
इतने ही मांझ सुनि स्यौरी के विराज आनि,
गयो अभिमान चलो पग गहि लीजिये।
आय खुनसाय कहि नीर को उपाय कहो,
गहो पग भीलनि के स्वच्छ तन भीजिए॥ ७॥

रतन अपार सार सागर उधार किये,
लिए हित चाय के बनाय माला करी है।
सब सुख साज रघुनाथ महाराज जू को,
भक्त सौं बिभीषण जू आनि भेंट धरी है॥
सभा ही की चाह अवगाह हनुमान गरे,
डारि दई सुधि भई मति अरबरी है।

राम बिन काम कौन फेरि मनी दीने डारि,
खोलि त्वचा नामहिं दिखायो बुद्धि हरी है ॥८॥

छप्पय

जय जय मीन बराह कमठ नर हरि बलि वामन।
परशुराम रघुबीर कृष्ण कीरति जग पावन॥
बुद्ध कलङ्की व्यास पृथू हरि हंस मन्वतर।
यज्ञ ऋषभ हयग्रीव ध्रुव वरदेन धन्वतर॥
बद्रीपति दत्त कपिलदेव सनकादिक करुणा करो।
चौबीस रूप लीला रुचिर अग्रदास उर पद धरो॥

विधि नारद शंकर सनकादिक कपिल देव मनुभूप,
नर हरिदास जनक भीष्मबलि शुक मुनि धर्म स्वरूप॥
अन्तरङ्ग अनुचर हरजू के जो इनको यश गावे।
आदि अन्तलों मंगल तिनके श्रोता वक्ता पावे॥
अजामील प्रसंग यह निर्णय परमधर्म को जान।
इनकी कृपा और पुनि समझे द्वादश भक्त प्रधान॥

कवित्त

न्हाता ही बिदुर नारि अङ्गनि प्रक्षाल करि,
आये गण द्वार कृष्ण बोलिकै सुनायो है।
सुनत हि सुर सुधि डारलै निडर मानो,
राख्यो मद भरि दौरि आनिकै चितायो है॥
डारि दियो पीतपट कटि लपटाय लियो,

हियो सकुचायो वेष वेग ही बनायो है।
बैठी ढिग आय केरा छीलि छिलका खबाइ,
आयो पति खीझ्यो दुःख कोटि गुनो पायो है॥ १ ॥
प्रेम को बिचारि आप लागे फलसार देन,
चैन पायो हिये नारी बड़ी दुःखदाई है।
बोले रीझि श्याम तुम कौन बड़ो काम,
तो पै स्वाद अभिराम कैसी बक्स में न पाई है॥
तिया सकुचाई कर काटि डारौं हाय,
प्राण प्यारे को खबाय छीलि छिलका निभाई है।
हित ही की बात दोऊ कोऊ पार पावै नाहिं,
नीके ले लडावै सोई जाने यह गाई है॥ २॥
कुँती करतूति कैसे करै कौन भूत प्राणी,
माँगत विपत्ति जासों भाजें सब जन हैं।
देख्यो मुख चाहौं लाल देखे बिन हिये साल,
हूजिये कृपालु नहिं दीजै बास बन है॥
देख विकलाई प्रभु आँखि भरि आई फिरि,
घरहि को ल्याई कृष्ण प्राण तन धन है।
श्रवण वियोग सुनि तनक न गयो भयो,
वपु न्यारो अहो एही साँचोपन है॥ ३॥

शब्द १

मन परदेशी हो ये नहीं अपना देश॥ टेक॥
सत् का कहना सत् में रहना, आनन्दरूप किसी का भयना।
जो कोई कहै सभी की सहना, ये ही रटन हमेश॥ १॥

गुरु का वचन सत्य कर मानो, जगत् जाल झूठा कर जानो।
तत्वमसि का रूप पिछानो, कट जांय करम कलेश ॥ २ ॥
जो दीखे सो रूप हमारा, कोई नहीं है हमसे न्यारा।
मित्र और शत्रु कोई न हमारा, मिट गये राग द्वेष ॥ ३ ॥
शाह गुरु शुकदेव बिराजे, चरणदास चरणों में साजे।
गुरु के बचन कभी नहीं त्यागे यही सत्य उपदेश ॥ ४ ॥

२

अब मैं अपने राम को रिझाऊं ॥ टेक ॥
डार पात के हाथ न लाऊं, ना कोई वृक्ष सताऊं।
पात पात में साहिब मेरा, झुक कर शीश नवाऊं ॥ १ ॥
गङ्गा जाऊं न यमुना जाऊँ, ना कोई तीरथ न्हाऊँ।
अठसठ तीरथ हैं घट भीतर, वाही में मल २ न्हाऊं ॥ २ ॥
औषधि लाऊं न बूटी लाऊं, ना कोई वैद्य बुलाऊं।
पूरण वैद्य मिले अविनाशी, उनको ही नब्ज दिखाऊं ॥ ३ ॥
ज्ञान कुठारा कस कर बांधूं, सुरति कमान चढ़ाऊं।
पांच चोर हैं या घट भीतर, उनको मार गिराऊं ॥ ४ ॥
योगी हूं ना जटा बढ़ाऊं, ना मैं अंग विभूत रमाऊं।
जिस रंग रंगे आप विधाता, वाही में आनन्द मनाऊं ॥ ५ ॥

३

इतना तो करना स्वामी जब प्राण तन से निकले,
गोविन्द नाम कह कर, मेरे प्राण तन से निकले ॥ टेक ॥
श्री गंगाजी का तट हो, या यमुना जी का बट हो।

और सांवरा निकट हो, फिर प्राण तन से निकले ।। १ ।।
श्रीवृन्दाबन का स्थल हो, मेरे मुख में तुलसी दल हो ।
विष्णु चरण का जल हो, फिर प्राण तन से निकले ।। २ ।।
सन्मुख सांवरा खड़ा हो, बन्शी का सुर भरा हो ।
तिरछा चरण धरा हो, फिर प्राण तन से निकले ।। ३ ।।
शिर सोहना मुकुट हो, मुखडे पे काली लट हो ।
यही ध्यान मेरे घट हो, फिर प्राण तन से निकले ।। ४ ।।
उस वक्त जल्दी आना, ना कौल भूल जाना ।
नूपुर की धुनि सुनाना फिर प्राण तन से निकले ।। ५ ।।
मेरे प्राण निकलें सुख से तेरा नाम निकले मुख से ।
बच जाऊं घोर दुःख से, फिर प्राण तन से निकले ।। ६ ।।
जब कण्ठ प्राण आवे, कोई रोग ना सतावे ।
तू दर्श यदि दिखावे, फिर प्राण तन से निकले ।। ७ ।।
यह नेकसी अरज है, मानो तो क्या हरज है ।
कुछ तेरा भी फरज है, फ़िर प्राण तन से निकले ।। ८ ।।

४

हमारे प्रभु अवगुण चित ना धरो ।। टेक ।।
समदर्शी है नाम तुम्हारो, चाहे तो पार करो ।।
इक नदिया इक नार कहावत, मैलो नीर भरो ।
जबमिल गयो तब एक रूप भयो, गंगा नाम परो।।
एक लोहा पूजा में राखो, एक घर बधिक परो ।
ऊंच नीच पारस नहीं जाने, कंचन करत खरो ।।

अब की वेर मोहि नाथ उबारो, नहि प्रण जात टरो।
यह माया भ्रमजाल निवारो, सूरदास सगरो॥

५

दीनानाथ दयानिधि स्वामी, कौन भांति मैं तुम्हें रिझाऊं।।टेक।।
श्रीगंगा चरणों से निकसी, शूचो नीर कहां से प्रभु लाऊं॥
काम धेनु कल्पवृक्ष तुम्हारे कौनसो पदार्थ भोग लगाऊं॥
चार वेद तुम मुख से भाषे, और कहा प्रभु पाठ सुनाऊं॥
अनहद बाजे बजत तुम्हारे ताल मृदंग क्या शंख बजाऊं॥
कोटि भानु थारे नखको शोभा दीपक ले प्रभु कहा दिखाऊं॥
लक्ष्मी थारी चरणन की चेरी, कौन द्रव्य प्रभु भेट चढ़ाऊं॥
तुम तिरलोकी के कर्त्ता हर्त्ता, तुम्हें छोड़ प्रभु कौन पै जाऊं॥
सूर श्याम प्रभु विपत्त बिडारन, मन वांछित फल तुमहि से पाऊं॥

६

हमारे प्रभु एक तुम हो ओंकार॥ टेक॥
मात पिता गुरु बन्धु सहोदर, धन विद्या परिवार॥
मन बल बुद्धि प्राण तुम हो हो नयनन में उजियार।
हरि होकर हरे रंग में दीसो, पत्र पुष्प फल डार॥ १॥
धरणी आकाश शशी अरु तारे, बिजली में चमकार।
ऊपर नीचे पर्वत सागर, सब तुम अपरम्पार॥ २॥
तुम ही सूरज में हो गरजो, बरसो अमृत धार।
एक धुनी हो तुम से सब की तुमरा वार न पार॥ ३॥
सुन्दर शक्ति विकाश शुद्धता, हमको दे दातार।

काम क्रोध मद लोभ निवारो, परमानन्द दो प्यार ॥ ४ ॥

७

लज्जा मेरी राखो ना श्याम हरी ॥ टेक ॥
कीनी कठिन दुशासन मो से गह केसो पकड़ी ॥
आगे सभा दुष्ट दुर्योधन, चाहत नगन करी ।
पांचों पण्डव सभी बल हारे, इन से कछू ना सरी ॥ १ ॥
भीष्म द्रोण विदुर भवे विस्मय, इन सब मौन धरी ।
अब नहीं मातु पिता सुत बान्धव, एक टेक तुम्हरी ॥ २ ॥
बसन प्रवाह दिये करुणानिधि, सेना हार परी ।
सूरदास जब सिंह शरण जई, स्यारों की क्या है डरी ॥ ३ ॥

८

किन तेरो गोबिन्द नाम धरो ॥ टेक ॥
लेन देन के तुम हितकारो, मोते कछु ना सरो ॥ १ ॥
विप्र सुदामा कियो अयाचक, तन्दुल भेट धरो ॥ २ ॥
द्रुपदसुता की तुम पति राखी, अम्बर दान करो ॥ ३ ॥
सन्दीपन के तुम सुत लाये, विद्या पाठ पढ़ी ॥ ४ ॥
सूर की बिरियां निठुर होये बैंठे कानन मूंद धरो ॥ ५ ॥

९

अरे मन तू गोबिन्द के गुन गाना रे ॥ टेक ॥
नाहक चिन्ता करता डोले, जो पाना सो खानारे ॥ १ ॥
झूंठो धाम झूठी है दौलत, काहे चित्त फंसानारे ॥ २ ॥
अन्त समय कोई काम न आवे. हाथ पसारे जानारे ॥ ३ ।

कोटि यतन चाहे करले मूरख, पच २ कर मरजाना रे ॥ ४ ॥
जो ललाट लिखा सोई मिली है, अधिक ना मिले दाना रे ॥ ५ ॥
काम क्रोध का पहिन चोलना, काहे को इतराना रे ॥ ६ ॥
राधा माधव हित सों भजले, याते हो कल्याना रे ॥ ७ ॥

१०

जगदीश्वर तुम्हारा सहारा हमें यहां दीखे न कोई हमरा हमें ॥
गर्भ यातना के संकट के, करके कृपा जो उबारा हमें ॥ १ ॥
दांत नहीं थे जब दूध दियो तब, फिरभी कभी न बिसारा हमें ॥
सदा रहो साथी घट भीतर, पलभर भी करते न न्यारा हमें ॥
जो कुछ सुख तुम देहु दया कर, क्या कोई देगा बिचारा हमें ॥
धर्मदास कहे भव वारिधि से, पार कबीर उतारा हमें ॥

११

आलम में किस का डर है जिस पर नज़र हो तेरी।
बेशक वह बेख़तर है जिस पर मेहर हो तेरी ॥
दुशमन न कोई उसका, होवे तू दोस्त जिसका।
दुनियाँ ही यार होवे, हां जब मदद हो तेरी ॥
दर्दो अलम वहाँ के, ऐबो गुनाह जहां के।
कोई न पास आवें, जिसको पनाह हो तेरी ॥
राई से कोह कर दे, ख़ाली को दम में भर दे।
थोड़े से तू बहुत दे, पर जब रज़ा हो तेरी ॥

१२

कछु लेना न देना मगन रहना ॥ टे ॥

पांच तत्त्व का बना पींजरा, जामें बोले मेरी मैना ॥ १ ॥
तेरो पिया तेरे घट में बसत है, सखी खोल कर देखो नैना ॥ २ ॥
गहरी नदिया नाव पुरानी, खेवटिया से मिले रहना ॥ ३ ॥
कहें कबीर सुनो भाई साधो, गुरु के चरण में लिपट रहना ॥ ४ ॥

१३

सच्चा सत्गुरु मिले तो चेला, पलट के कीड़े से भृङ्ग होकर।
समाया अपने में आप फिर मैं, मिसाले जलकी तरंग होकर ॥
इड़ा पिंगला सुषम्ना, तीनों नाड़ी के संग होकर।
हमेशा बहती है यह त्रिवेणी, हमारी भृकुटी में गंग होकर ॥
यह दिल को धोया मैं खूब मल मल, मिसाले दर्पण के रंग होकर।
दुई दूर कर हुआ मैं इकता, दुरङ्ग से फिर इकरंग होकर ॥
रूप सच्चिदानन्द है मेरा, कहां जहां से सोऽहं होकर।
दिल कायर के कतर लिये पर, हुआ वह बेपर अपंग होकर ॥
क्या मजाल है उड़ान भरले, हमारा दिल ये मतंग होकर।
ज्ञान का अंकुश लगाया हमने, हमेशा सन्तों के संग होकर ॥
बिन सत्संगति कोई न सुधरे, कुसंग छोड़ा सुसंग होकर।
नाभि कमल से गया मैं सीधा, बङ्क नाल की सुरंग होकर ॥
शून्य शिखर में सोया मैं सुखसे, जन्म मरण से निसंग होकर।
क्या मजाल है वहां काल की, जो देखे मुझे बदरंग होकर ॥
योगी जुगत जीवें हमेशा, युगान युग उस प्रसंग होकर।

सूरजगिरि कहें संन्यासी से, अड़े कोई फुकरा मलंग होकर ॥
तो खूब ठहरे बराबरी की सभा में शब्दों से जंग होकर ॥
संसारी नहीं अड़े सन्त से, अड़े कोई मंग निहंग होकर ॥
आखिर को फिर जले ज्ञान बिन, मिसाले दीपक पतंग होकर।
कवितागिरि कहें कविताई को, ढंग से मथ कर कुढंग होकर ॥

१४

मैं वारि जाऊँ सतगुरु की, मेरो कियो भरम सब दूर ॥ टेक ॥
प्यालो प्यायो प्रेम को, घोर सजीवन मूर।
चढ़ी खुमारी नाम की, होगई चकनाचूर ॥ १ ॥
विमल प्रकाश अकाश, लख्यो बिना शशि शूर।
मगन भयो मन गगन में, सुन अनहद तूर ॥ २ ॥
ममता घट समता बढ़ी, उर अन्तर भरपूर।
राग द्वेष जग से मिटो, अब मन भयो मजूर ॥ ३ ॥
शब्द सुनत यमदूत के मुख में लागी धूर।
आय मिले धर्मदास को, सतगुरु हाल हजूर ॥ ४ ॥

१५

हमारे गुरु ने दीनी है ज्ञान जड़ी ॥ टेक ॥
यह तो जड़ी मोय प्यारी लागै, अमृत रस की भरी ॥ १ ॥
काया नगर में अधर एक बंगला, वा में गुप्त धरी ॥ २ ॥
पांच नाग पच्चीस नागिनी, सूंघत तुरत मरी ॥ ३ ॥
इस काली ने सब जग खाया, सतगुरु देख डरी ॥ ४ ॥
कहे कबीर सुनो भाई साधो, ले परिवार तरी ॥ ५ ॥

१६

सखी मेरे जगे पूर्वले भाग, आज गुरु दर्श दिखाय दियोरी ॥टेक॥
सब से तोड़ एक संगी, जोड़ी, हमारी अटल धुनि रही लाग।
जब सत्गुरु मेरे अंगना में आये. हमारे भरम भूत गए भाग॥
घर अंगना परिवार बगर में, हमारो अभय नगारो रह्यो बाज॥
प्रेम पिया संग हिलमिल राची, मैंने नेक न मानी लाज॥
कहैं कबीर सुनो भाई साधो, मुझे सुख का दिया सुहाग॥

१७

कोई करो मित्रता मीत प्रीत की रीत निराली है॥ टेक॥
जलसे दूध ने मेल किया था, निज गुण अपना रूप दिया था।
वह कर लिया आप समान, दुई सब दूर निकाली है॥ १॥
देख अग्नि पर दूध का तपना, जलने अंग जला दिया अपना।
नहीं जलने दिया यार, तप्त सब आप उठाली है॥ २॥
दूध उफन कर गिरा अग्नि में, समझा यार जल गया लग्न में।
फिर जलके छींटे पाय, शोक तजि शीतलता लई है॥ ३॥
योंतो सहज है दिलका लगाना, मगर कठिन है ओड़ निभाना।
टेकचन्द कर ख्याल कि वो तो, तेरा ख्याली है॥ ४॥

१८

टेक–ऊधो कर्मन की गति न्यारी।
सब नदियां जलभर भर रहियां सागर किस विध खारी॥
उज्वल पङ्ख दिये बगुला को कोयल किस गुण कारी॥
सुन्दर नयन मृगा को दीने बन बन फिरत उजारी॥

मूरख मूरख राजे कीने पंडित फिरैं भिखारी ॥
सूर श्याम मिलिवे की आशा छिन छिन बीतत भारी ॥

१९

सब दिन होत न एक समान ॥ टेक ॥

इक दिन राजा हरिश्चन्द्र गृह संपति मेरु समान ।
इक दिन जाय श्वपच गृह सेवत अम्बर हरत मशान ॥
इक दिन दूलह बनत बराती चहुंदिशि दुरत निशान ।
इक दिन डेरा होत जंगल में कर सूधे पग तान ॥
इक दिन सीता रुदन करत है महा विपिन उद्यान ।
इक दिन रामचन्द्र मिल दोऊ विचरत पुष्प विमान ॥
इक दिन राजा राज युधिष्ठिर अनुचर श्रीभगवान ।
इक दिन द्रौपदी नग्न होत है चीर दुशासन तान ॥
प्रगटति है पूरब की करनी तज मन शोच अजान ।
सूरदास गुण कहां लग वरनों विधि के अङ्क प्रमान ॥

२०

क्यों सोया गफलत का माता जाग रे नर जाग रे ।
या जागै कोई योगी भोगी या जागै कोई चोर रे ॥
या जागै कोई सन्त पियारा लगी राम से डोर रे ।
ऐसी जागन जाग पियारे जैसी ध्रुव प्रहलाद रे ॥
ध्रुव को दीनी अटल पदवी दिया प्रहलाद को राज रे ।
हरि सुमरे सोई हंस कहावे कामी क्रोधी काग रे ॥
तन का चोला भया पुराना, लगा दाग पर दाग रे ।

मन है मुसाफिर तनु की सराय बिच क्यों कीना अनुराग रे ॥
साधु सन्त सत्गुरु की सेवा पावै अचल सुहाग रे ।
नितानन्द भज राम गुमानी जागन पूरन भाग रे ॥

२१

जन्म तेरो बातों में बीत्त गयो तैने कबहूं न कृष्ण कह्यो ॥
पांच बरस का भाला भोला, अब तो बीस भयो ॥
मकर पचीसी माया कारण देश बिदेशी गयो ॥
तीस बरस की अब मति उपजी लोभ बढ़े नित नयो नयो ॥
माया जोड़ी लाख करोड़ी अजहुं न तृप्त भयो ॥
वृद्ध भये जब आलस उपज्यो जप तप कंठ रह्यो ॥
साधू की संगति कबहुं न कीनी बिरथा जन्म गयो ॥
यह संसार मतलब का लोभी झूठा ठाट ठयो ॥
कहत कबीर समझ मन मूरख तू क्यों भूल गयो ॥

२२

आऊंगा न जाऊंगा मरूंगा न जीऊंगा ।
गुरु के शब्द से मैं अमीरस पीऊंगा ॥
कोई पूजे मढिया कोई पूजे गौरां ।
दोनों की मति हड़ लेगया चोरा ॥
कोई जावे मक्का कोई जावे काशी ।
दोनों के गले बिच पड़ गई फांसी ॥
कोई फेरे माला कोई फेरे तसबी ।
देखोरे लोगो यह दोनों की कसबी ॥

कहे कबीर सुनो नर लोई ।
हम ना किसी के हमारा ना कोई ॥

२३

चार वर्ण में सोई बड़ा जिन राधा कृष्ण रटा रटा ॥
काहे को जोड़े माल खज़ाने काहेको चुनावत ऊंची अटा ॥
जब यम की तलबी आवेगी छाँड़ जाय सब लटा पटा ॥
यह दम हीरा लाल अमोलक पल में जाता घटा घटा ॥
वहाँ आया तू कौल करार कर यहां फिरता तू नटा नटा ॥
अपने कुटुम्ब को ऐसे देखै पलक उठाये पटा पटा ॥
जब हंसा चल्यो जात है छोड जाय तू रटा रटा ॥
यह संसार मतलब का गरजी बातां करता झूठ मिठा ॥
चन्द्रसखी भज बालकृष्ण छबि कानन कुण्डल मुकुट जड़ा ॥

२४

तुम देखो सन्तो भूल भुलैयां का तमाशा ॥ टेक ॥
ना काई आता ना कोई जाता, झूठ जगत का नाता ।
ना काहू की बहन भानजी, ना काहू की माता ॥
ड्योढी तक तेरी तिरिया जावे, पोली लग तेरी माता ।
मरघट तक सब जांय बराती, हंस अकेला जाता ॥
एकतई ओढ़े दोतई ओढ़े ओढे मलमल खासा ।
शाल दुशाला नित की ओढ़े अन्त खाक मिल जाता ॥
कोड़ी कोड़ी माया जोड़ी, जोड़े लाख पन्चासा ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, संग चले ना माशा ॥

२५

देश मेरा बाँका है भाई जहाँ हंस अमर होजाई ॥ टेक ॥
देश मेरे की अद्भुत लीला वाकी थाह न पाई।
शेश महेश गणेश थके हैं शारद मति भरमाई ॥
चांद सूरज अग्नि तारों की जोति जहाँ मुरझाई।
अर्ब खर्व बिजली जहाँ चमके तिनकी छबि शरमाई ॥
देश मेरे को कठिन पन्थ है तुम से चला न जाई।
सन्त रूप धरके जाना हो नातर काल ले खाई ॥
परधन मिट्टी के सम जानो माता नार पराई।
राग द्वेष की होली फूको तज दो मान बड़ाई ॥
सत्गुरु की नित्य शरण गहोरे चरणों में चित लाई।
नाम रूप मिथ्या जग त्यागो तब वहां पहुंचो जाई ॥
घाटी विकट निकट दरवाजा सत्गुरु राह बताई।
बिन सत्गुरु वाकी राह न पावे लाख करो चतुराई ॥
गुरु अपने को शीश नवाऊं आतम रूप लखाई।
निर्भयानन्द हैं गुरु हमारे संशय दिये मिटाई ॥

२६

मन हरदम हरि भज मुख से सीताराम बोल।
सीता राम राम बोल चाहे राधे श्याम बोल ॥
है सार जगत में नाम राम का अन्त कहूं मत डोल।
तज कपट दम्भ पाखण्ड ध्यान धर दिलकी घुण्डी खोल ॥ १ ॥
है झूठे मित्र कुटुम्ब कुधातु पर ज्यों सोने का झोल।
तन मृतक भये सब तजें आब घटे उठें न कौड़ी मोल ॥ २ ॥

था गर्भबास मे किया भजन करने का हर से कौल ।
यहां आय माया मैं काल का बज रहा सर पर ढौल ॥ ३ ॥
सच्चा हीरा तन पाय वृथा मत पत्थर धूल टटोल ।
हरसहाय मूढ भज कृष्ण विषय विषमत ना पीवै घौल ॥ ४ ॥

२७

गुरु के समान नहीं दूसरा जहान में ॥ टेक ॥

गुरु ब्रह्मरूप जानो शिव का स्वरूप जानो ।
साक्षात् विष्णु जानो लिखा है पुरान में ॥ १ ॥
गुरु ज्ञान बतावे गुरु पाप से बचावे ।
ब्रह्म से मिलावे गुरु तुर्या पद ध्यान में ॥ २ ॥
यही श्रुति वेद कहता गुरु बिन ज्ञान कैसा ।
ज्ञान विना मुक्ति कैसी आवे तेरे ध्यान में ॥ ४ ॥
छल कपट त्याग दीजो गुरु जी की सेवा कीजो ।
सांवरा की शरणा लीजो खेलो ना मैदान में ॥४॥

२८

अखियां गुरु दर्शन की प्यासी ॥ टेक ॥

देखन चाहें कमल नयन को हरदम रहत उदासी ॥ १ ॥
केशर तिलक माल मोतियन की वृन्दावन के वासी ॥ २ ॥
जो तन लागे वोही तन जाने लोगन के मुख हाँसी ॥ ३ ॥
नेह लगाय त्याग दई तृण सम डाल गये गल फाँसी ॥ ४ ॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो लूंगो करवत काशी ॥ ५ ॥

२९

अंखिया मोहन की बिन देखे रहा न जाय ॥ टेक ॥
जिन नैनन में श्याम बसत हैं दूजा नाहिं सुहाय ॥ १ ॥
कारज रेख किरकिरा लागे सुरमा नाहिं ठहराय ॥ २ ॥
मेरे अङ्गना में आय के मटकी लेत उठाय ॥ ३ ॥
और के डरते डरपत नाहीं जसुआ देख डराय ॥ ४ ॥
बंशी वाले मोहना बंशी नेक बजाय ॥ ५ ॥
तेरी वन्शी ने मेरो मन हरो घर अङ्गना न सुहाय ॥ ६ ॥
सूरदास प्रभु तुम से मिलन को हर से हेत लगाय ॥ ७ ॥

३०

तेरा पिञ्जरा बना है अमोल निरख पिञ्जरे ने भाई ॥ टेक ॥
इस पिञ्जरे में तोता मैना ओऽहं सोऽहं बोलत बैना ।
सुरत निरत को डाट शब्द में चितलाई ॥ १ ॥
पांचो मार पचीसों वश में इन पांचो को करले रस में ।
शून्य शिखर को खोज भरम तेरा मिट जाई ॥ २ ॥
खम्ब गडे हैं बड़े रसीले बन्ध मत समझो इनको ढीले ।
गला पवन की गांठ खम्ब में उलझाई ॥ ३ ॥
जो सत्गुरु की शरणा आवे मङ्गल मूल परम पद पावे ।
हो तुर्या असवार मिटै आवा जाई ॥ ४ ॥

३१

दोहा–तू ही मात तू ही तात है, तू ही बन्धु सुत नार ।
तू ही आदि तू ही अन्त है, तुही गुरु दातार ॥

तेरा यह खेल अपारा है जित देखूं तितत् हो तू है ॥ टेक ॥
तूही बन में तूही घर मन्दिर में कूप बावड़ी तूही सरवर में।
तूही सब का करतार भरम से न्यारा है ॥ १ ॥
इन्द्रियों में देखा तू मन है शुद्ध करण में तू ही पवन है।
वरणों में तू ही वरण जलों में गंगा धरा है ॥२॥
ज्ञानी में ब्रह्मज्ञान तू ही है योगी का मुख ध्यान तू ही है।
सबका जीवन प्राण तू हो आधार है ॥ ३ ॥
फूल पात फल डाल तू ही है योगो का मुख ध्यान तू ही है।
परमानन्द प्रकाश शब्द ओंकारा है ॥ ४ ॥

३२

जगत् में हरि सम मित्र न कोई ॥ टेक ॥
भाँति २ के देत पदारथ कृपा नीर से धोई ॥ १ ॥
जो नर हरि सों करे मित्रता आप हरि सम होई ॥ २ ॥
हरि सुमिरण सत्सङ्ग जगत् में सार पदारथ दोई ॥ ३ ॥
भजो कन्हैयालाल हरि को वृथा जन्म मत खोई ॥ ४ ॥

३३

कोई पहुंचे सन्त विवेकी उस मग की राह कठिन है ॥ टेक ॥
बिना पन्थ बिन पग का मारग कोई पहुंचे बिरला जन है ॥ १ ॥
शून्य शिखर पर चढ़कर देखा जहाँ बिना नयन दर्शन है ॥ २ ॥
बिना धरण जहाँ आसन मारो बिना देह इक जन है ॥ ३ ॥
मगन भई जब पिय को पायो उस पीव पर मेरा मन है ॥ ४ ॥
मङ्गलानन्द मगन सुखराशी सत् चित् आनन्द घन है ॥ ५ ॥

३४

चले गये दिल के दामन गीर ॥ टेक ॥

जब सुध आवे तुम्हरे दर्श की उठें कलेजे पार ॥ १ ॥
नटवर भेष नयन रतनारे सुन्दर श्याम शरीर ॥ २ ॥
वृन्दावन बंसीबट त्यागो निर्मल यमुना नीर ॥ ३ ॥
आप ही जाय द्वारिका छाये खारी नद के तीर ॥ ४ ॥
सब गोपियन को नेह बिसारो ऐसे भये वे पीर ॥ ५ ॥
सूरदास ललिता उठ बोली आखिर जाति अहीर ॥ ६ ॥

३५

वा घर जाइयो हे नींद जा घर राम नाम नहीं भावे ॥ टेक ॥
बैठ सभा में मिथ्या बोले निन्दा करे पराई ।
वह घर हमने तुझे बताया जय्यो बिना बुलाई ॥ १ ॥
के तू जय्यो राज दुवारे के रसिया रस भोगी ।
हमरा पीछा छोड़ बावरी हम हैं रमते जोगी ॥ २ ॥
ऊँचा मन्दिर धौर सखी जहां कामिन चंवर ढुलावे ।
हमरे संग क्या लेगी बावरी पत्थर पर दुःख पावे ॥
कहे भरथरी सुनरी निद्रा यहां नहीं तेरा बासा ।
हम तो रहते राम भरोसे गुरु मिलने की आशा ॥ ४ ॥

३६

राम ज्यूं राखे त्यूं रहिये ॥ टेक ॥

जो प्रभु करे भला कर मानो, मुखते बुरा न कहिये ॥ १ ॥
हर होनी अनहोनी भी करदे, सो सब सिर पर सहिये ॥ २ ॥
कृपा कर जो नाम जपावे, सो अन्तर ले गहिये ॥ ३ ॥
महरदास हरि आज्ञा माने, यह सेवक को चाहिये ॥ ४ ॥

कृपा कर निज नाम जपावे, सो अन्तर ले नहिये ॥ ३ ॥
महरदास हरि आज्ञा माने, यह सेवक को चहिये ॥ ४ ॥

३७

मोको कहां ढूंढेरे बन्दे, मैं तो तेरे पास में ॥ टेक ॥
ना तीरथ में ना मूरत में, ना एकान्त निवास में ।
ना मन्दिर में ना मस्जिद में, ना काशी कैलाश में ॥ १ ॥
ना मैं जप में ना मैं तप में, ना मैं व्रत उपवास में ।
ना मैं क्रिया कर्म में रहता, ना मैं योग संन्यास में ॥ २ ॥
नहीं प्राण में नहीं पिण्ड में, ना ब्रह्माण्ड अकाश में ।
ना मैं त्रिकुटी भंवर गुफा में, सब श्वासन की श्वास में ॥ ३ ॥
खोजी होय तुरत मिल जाऊं, एक पल ही की तलाश में ।
कहे कबीर सुनो भाई साधो, मैं तो हूं विश्वास में ॥ ४ ॥

३८

हरि हरि जप लेनी अवसर बीतो जाय ॥ टेक ॥
जो गये सो फिर नहीं आवें, कर विचार मन लाय ॥ १ ॥
यह जग बाजी सांच न जानो, तामें मत भरमाय ॥ २ ॥
कोई किसी का है नहीं बोरे, नाहक लिये लगाय ॥ ३ ॥
अन्त समय कोई काम न आवे, जब यम दे बौराय ॥ ४ ॥
चरणदास कहे सहजो बाई, सतसङ्गत शरणाय ॥ ५ ॥

३९

नैनो लिख लेनी साईं तेरे हजूर ॥ टेक ॥
आगे पीछे दहने बाँये, सकल रहा भरपूर ॥ १ ॥
जिनको ज्ञान गुरु का नाहीं, सो जानत हैं दूर ॥ २

योग यज्ञ तीरथ व्रत साधैं, पावत नाहीं कूर ॥ ३ ॥
स्वर्ग मृत्यु पाताल जिसी में, सोई हर का नूर ॥ ४ ॥
चरणदास गुरु मोय बताया, सो है सब का मूर ॥ ५ ॥

४०

कान्हा बंशी वारे मोरी गली आजा रे ॥ टेक ॥
कोरी कोरी मटकन दही जमायो, मेरो ही माखन खाजारे ॥ १
वृन्दाबन की कुञ्ज गलिन में, झुक मुखड़ा दिखाजा रे ॥ २ ॥
मैं तो तिहारे पर हुई हूं बावरी, तन की तपत बुझाजा रे ॥ ३ ॥
चरणदास कहे सुखदेव प्यारे, नैनों से नैन मिलाजा रे ॥ ४ ॥

४१

कान्हा बंशीवारे उठाना मोरी मटकी ॥ टेक ॥
सङ्ग की सहेली जल भर भर सटकी।
बंशी की धुन सुन मैं ही रही अटकी ॥ १ ॥
दौरानी जिठानी से रहे मेरी खटकी।
देंगी सब ताना एती बार कहां अटकी ॥ २ ॥
मटकी उठाऊं नहीं जानू तेरे घटकी।
सङ्ग ले जाय शोभा सारे पनघट की ॥ ३ ॥
शंभु सखी की नाव परी अटकी।
जो जानत हो घटकी तो लाज राखो घूँघट की ॥४

४२

अब ना रहूंगी राम अटकी, म्हारी लगी जो राम से प्रीति ॥ टेक
मन्दिर जा चरणामृत लेसी, कपटी लोगों ने अटकी।
ठाकुर जी आगे नृत्य करूं थी, ताल बजाऊं और चुटकी ॥ १ ॥

राजनीति की सार को जाने, साधांरे संग अटकी ।
देवर जेठ की कान न मानी, पड़ो घूंघट पर अटकी ॥ २ ॥
गहना गूंठी कभी न पहरूं, गल तुलसी की कण्ठी ।
नोसर हार गले रो त्यागो, भूकी नागरनट की ॥ ३ ॥
म्हाने सत्गुरु ऐसे मिल गये, लागी ज्ञान की गुटकी ।
मीरां के प्रभु गिरधर नागर, आवागमन से छुटकी ॥ ४ ॥

४३

जो कोई चित्त से मोहे न बिसारे, मैं ना बिसारूं प्रण है यही मेरा ॥
धर्म प्रिय हो धर्म बढाऊं, सफल कार्य कर अर्थ बताऊं ।
मुक्ति चाहे तो पार लगाऊं, पल क्षण मांहि ना लागत बेरा ॥१॥
रोग हरूं चिन्ता सब टारूं, अभय करूं शत्रु को मारूं ।
अचल भक्त जन बेग उबारूं, सेवा करूं आप बन चेरा ॥२॥
मेरा नाम भक्त सुखदायक, सदा विपत्ति में होत सहायक ।
जो कोई रटे कृष्ण यदुनायक, ताके हृदय करत नित डेरा ॥३॥

४४

अरे लोगो तुम्हें क्या हैं, या वह जाने या मैं जानूँ ॥ टेक ॥
वह दिल मांगे तो हाजिर है, वह सर मांगे तो बेसर हूं ।
जो मुख मोडूं तो काफिर हूं, या वह जाने या मैं जानूं ॥१॥
वह मेरी बग़ल छुप रहता, मैं उसके नाज़ सभी सहता ।
वह दो बातें मुझे कहता, या वह जाने या मैं जानूँ ॥ २ ॥
वह मेरे खून का प्यासा, मैं उसके दर्द का मारा ।
दोनों का पन्थ है न्यारा, या वह जाने या मैं जानूँ ॥ ३ ॥

४५

टेक– बने जो कुछ धर्म कर ले, यही एक साथ जावेगा।
गया अवसर न तेरे फिर, यह हरगिज़ हाथ आवेगा॥
दिवाना बनके दुनियां में, समय अनमोल खोता है।
दिए लाखों की दौलत भी, न पल रहने तु पावेगा॥ १॥
धरी रह जायगी तेरी, अकड़ सारी ठिकाने पर।
जब आके यम जकड़ गरदन, पकड़ कर धर दबावेगा॥ २॥
कुटुम्ब परिवार सुत जोई, सहायक होगा ना कोई।
तेरे पापों की गठरी खुद, तू ही सिर पर उठावेगा॥ ३॥
गर्भ में था कहा तू ने, न भूलूँगा प्रभु तुझ को।
भला तू जाय के अपना उसे क्या मुँह दिखावेगा॥ ४॥
तुझे तो घर से जंगल में, तेरा ही खुद बखुद बेटा।
सुला कर लकड़ियों के ढेर पर, तुझको जलावेगा॥ ५॥
कहे कबीर समझाई, तू कहना मान ले भाई।
नहीं तो अपनी ठकुराई, वृथा सारी गंवावेगा॥ ६॥

५५

बन आयेकी बात रे ऊधो, बन आये की बात रे॥ टेक॥
एक समय हरि हमने देखे, मुख धोवत ना हाथ रे।
अब तो कृष्ण भए ब्रह्मचारी, सौ सौ बिरियाँ न्हात रे॥१॥
एक समय हरि हमने देखे, छीन छीन दधि खात रे।
अब तो कृष्ण भए हैं राजा, चढ़े सिंहासन जात रे॥ २॥
कर पै पात पात कर ही पै, मांग २ दधि खात रे।

जो माधो इस बन नहिं आवें, तुम क्यों आवत जातरे ॥ ३ ॥
यही बात उनसे जा कहियो, और बातों की बात रे।
यह बात उनहीं को सोहे, जाके दो जननी दो तात रे ॥ ४ ॥
ज्यूँ मद कुल बसे काष्ट में, बंधा अम्बुज के पात रे।
जो गंगा देवन को दुर्लभ, तामें श्वान नहात रे ॥ ५ ॥
तेल के संग फुलेल होत है, महकत बास सुबास रे।
मोती बीच सूत का तागा, महंगे मोल बिकात रे ॥ ६ ॥
वृन्दाबन में गऊ चरावत, गोकुल ही को जात रे।
हाथ लकुटिया काँधे कमरिया, रज लिपटाए गात रे ॥ ७ ॥
यही वृन्दाबन यही बन कुञ्जन, यही पलाश के पात रे।
हाथ ओट हरि हमसे खाया, दधि माखन और भात रे ॥ ८ ॥
यो मन माधो जी से झगड़ूँ, दे कुब्जा के लात रे।
सूरश्याम कुब्जा संग ब्रज में गोपिन संग लजात रे ॥ ९ ॥

४७

मिलना कठिन है, कैसे मिलूँ पिया संग जाय ॥ टेक ॥
समझ सोच पग धरूं यतन से, करि बहु भाँति उपाय।
ऊंची सैल गैल रपटीली, पाँव नहीं ठहराय ॥ १ ॥
लोक अरु कुल की मर्यादा से, बहुतक मन सकुचाय।
धाय मिलूँ पिय से पीहर में, तो अनरीत दिखाय ॥ २ ॥
शून्य शिखर पर पिय को महल है, श्वेत ध्वजा फहराय।
शब्द स्वरूपी पिया बसत है, वहां सुरत झकोरा खाय ॥ ३ ॥
दूती सुमति आय धर्मिन को, दीनो पिय हिं मिलाय।
पिय ने पकरि प्रेम से बैंयाँ, लीन्हीं कण्ठ लगाय ॥ ४ ॥

४८

प्रभुजी भले बुरे हम तेरे ॥ टेक ॥

पेट भरे पर महा आलसी, सोवत साँझ सवेरे ॥ १ ॥
तुम समदर्शी अधम उधारन, चित्त न धरो अवगुण मेरे ॥ २
काम क्रोध अरु ममता तृष्णा, रहत सदा नित घेरे ॥ ३ ॥
तुम बिन कौन सहायक मेरो, बैरी बहुत घनेरे ॥ ४ ॥
माया बस ये जन्म गंवाया भटक भटक बहुतेरे ॥ ५ ॥
गोपी नाथ आस तज सब की, होउ श्याम के चेरे ॥ ६ ॥

४६

प्रभु तेरी माया लखी न जाय ॥ टेक ॥

सुर नर मुनि कोउ जान न पायो, विधि हरि शम्भु नचाय।
रूप रेख वाके नहीं कोई, ऐसो वेद बताय।
सो प्रभु निज जन कारण तारन, नाना रूप धराय ॥ १ ॥
छिन में राव रंक कर डारे, रंकहि राव बनाय।
अकरण करण करण को अकरण, करत न देर लगाय ॥ २ ॥
पंथ अनेक बाणी बहुतेरी, कहां २ चित्त फंसाय।
तेरी माया में सब मोहे, न्यारे भेद जनाय ॥ ३ ॥
सबका सार सकल की सम्मति, यह निश्चय जिय आय।
माधव प्रभु को नाम सुमरले, प्रेम सहित हर्षाय ॥ ५ ॥

५०

बांस चढ़ी हरषानी नटनियां ॥ टेक ॥

शब्द बाँस धुनि डोर पकड़ कर,
गगन में चढ़ मगनानी नटनियां ॥ १ ॥

बाजे अनहद ऊपर बाजैं,

चढ़ गई अधर ठिकाने नटनियाँ ॥ २ ॥

सत्यलोक में जाय डङ्का दीना,

गुरु को करत सलामी नटनियां ॥ ३ ॥

परमदास फिर उलटी चढ़,

चरण गुरू के लिपटानी नटनियां ॥ ४ ॥

५१

बतादे सखी कौन गली गये श्याम ॥ टेक ॥

गोकुल ढूँढ वृन्दावन ढूंढा मथुरा में होगई शाम ॥ १ ॥

मथुरा ढूँढत रैन बिहानी, रात कियो विश्राम।

भोर भयो जब बन २ ढूँडो, पायो कदमन छांह ॥ २ ॥

कहा कहूं बाके मुख की शोभा, कोटि उदय भये भानु।

चन्द्र सखी भज बालकृष्ण छबि, लाजत कोटि शत काम ॥ ३ ॥

५२

बम बम्भोले नाथ शिव नाथन के नाथ,

आज मेरी कामना पूरण करो।

मेरे बाबे की झोली में क्या २ चीज।

लौंग सुपारी धतूरा का बीज ॥ १ ॥

कोई बजावे शङ्ख घड़ावल, कोई बजावे ताल।

कोई मांगे खड़ा होकर गोदी में का लाल ॥ २ ॥

कोई चढावे बेल पत्र, कोई चढावे भङ्ग।

बैल की सवारी कीन्हीं पारवती के सङ्ग ॥ ३ ॥

५३

अनुभव स्वरूप निज रूप लखा जिन ओ३म् सोऽहं रटा २ रे ॥
अक्षय धन सम्पति मिल जावे, तृष्णा कबहुं मन न डुलावे।
कर सन्तोष बैठ रहो घर में, बाहर फिर मत उठा २ रे ॥ १ ॥
शान्त चित्त निर्मल बुद्धि होवे, वृथा कल्पना मन की खोवे।
अन्तर बाहर उज्वल करले, मल बाधा को छुटा २ रे ॥ २ ॥
राग द्वेष के फंद कट जावें, चहुं दिशि समताभाव दर्शावें।
निश्चय यही एक मन राखे, जगसों दृष्टि हटा २ रे ॥ ३ ॥
नाम रूप गुण लखे न जावे, सत् चित् आनन्द भरम नशावें।
माखन माखन खालो प्यारे, छोड़ दो ये मठा मठा रे ॥ ४ ॥

५४

कोई पीवो राम रस प्यासा रे ॥ टेक ॥
गगन मण्डल में अमृत बरसै, पीलो साँसम सांसा रे ॥ १ ॥
ऐसा महंगा अमी बिकत है, छै रत्ती बारह मासा रे ॥ २ ॥
जो पीवे सो जुग जुग जीवे, कबहुं न होत बिनाशा रे ॥ ३ ॥
इस रस कारण हुए नृप जोगी, छोड़े भोग बिलासा रे ॥ ४ ॥
सहज सिंहासन बैठे रहते, भस्म लगाय उदासा रे ॥ ५ ॥
गोपीचन्द भरथरी रसिया, अरु कबीर रइदासा रे ॥ ६ ॥
गुरु दादू प्रसाद को चुनके, पीया सुन्दरदासा रे ॥ ७ ॥

भजन बिन बावरे, तैंने हीरा सा जन्म गंवाया ॥ टेक ॥
कभी न आया सन्त शरण, में ना तैं हरि गुण गाया ।
बह बह मरा बैल की नांई सोय रहा उठ खाया ॥ १ ॥
ये संसार हाट बनिये की, सब जग सौदा आया ।
चातुर माल चौगणा कीना, मूरख मूल ठगाया ॥ २ ॥
ये संसार फूल संभल का, शोभा देख लुभाया ।
मारी चोंच रुई निकसाई, मूंडी धुन पछताया ॥ ३ ॥
ये संसार माया का लोभी, ममता महल चिनाया ।
कहे कबीर सुनो भाई साधो, हाथ कछु ना आया ॥ ४ ॥

५६

निर्बल के प्राण पुकार रहे जगदीश हरे जगदीश हरे ।
श्वासों के स्वर झनकार रहे, जगदीश हरे जगदीश हरे ॥ १ ॥
आकाश हिमालय सागर में पृथ्वी पाताल चराचर में ।
यह मधुर बोल गुंजार रहे, जगदीश हरे जगदीश हरे ॥ २ ॥
जब दया दृष्टि हो जाती है, जलती खेती हरियाती है ।
इस आश पै जन उच्चार रहे, जगदीश हरे जगदीश हरे ॥ ३ ॥
सुख दुःखों की चिन्ता है नहीं, भय है विश्वास न जाय कहीं ।
टूटे न लगा यह तार रहे, जगदीश हरे जगदीश हरे ॥ ४ ॥
तुम हो करुणा के धाम सदा, सेवक है राधेश्याम सदा ।
बस इतना सदा विचार रहे, जगदीश हरे जगदीश हरे ॥ ५ ॥

५७

जगदीश तू ही धन धन है ॥ टेक ॥

तू सत् चित् आनन्द घन है, दुष्टों का मान मर्दन है, भक्तों का प्राण जीवन है। है तू दोनों का दयाल, साधु सन्तों का प्रतिपाल, सर्वत्र तेरा वर्णन है ॥ १ ॥

रज्ज़ाकें हरदो आलम तो, मुश्ताके रहीम राहिम तो, खल्ला को शादो खुरम तो खु़दरा उश्शाको महबूब, हरज़ा जल्वा फ़िगन मरगूब, हर्चे मखफियो रोशन है ॥ २ ॥

ओ गौड़ बी काइन्ट टू मी. नाऊ. आई हम्बिल क्रीचर टू दी बाऊ। फोरगिव माई सिन्स ओ दाऊ दाऊ आर्ट माई गौड़ दाऊ आर्ट माई लौर्ड, दाई इक्वल देअर नन है ॥ ३ ॥

सरदारा मैंनूं भांदा बागों दे विच नहीं आंदा, दीदों दे बिन जी जांदा, मैंनूं करके बेहाल, घुलदा गैरोंदे नित नाल, तुसी मते गुणांदी खन है ॥ ४ ॥

आमार बाड़ी मोनो आवे, चांटान कोरवे ज्वल खावे, बेला-सारंग बजावे, गावे गावे मिष्टी तान, आमार जीव नेर प्रान, आमार तुमी तोन मोन है ॥ ५ ॥

हर लिहेसी मनई मनवा है, भटकायेंसी बन बनवा है, दो लागेसी तन मनवा है, एस् एस् टुनवा कीन, जियरा कर लिहेसी आधीन, टंटाननीक एहि खन है ॥ ६ ॥

म्हांकी थांकी यारी छै, थांकी गढ सरदारी छै, विनती थां से

म्हारी छै, ऍंडे महिल्या आजो, ढोलो भांगलो पिलाजो,
अन्नदाता थांने सौगन है ॥ ७ ॥
त्रैलोक्यपतिं वन्देहम्, करुणायतनं भुवनेशं, कृपया कुरु मे निःक्लेशं, यत्र यत्र राधेश्याम तत्र तत्र पातु माँ, पद्मिदं दैव अर्पण है ॥ ८ ॥

५८

मेरे भोला शरण में बुलालो मुझे,
घेरा माया ने नाथ बचालो मुझे ॥ टेक ॥
चित्त चंचल है तुम्हारे प्रेम पथ से फिर गया।
आके अवनति में पड़ा उन्नति के पथ से गिर गया ॥
पड़ा रोता हूं आके उठालो मुझे ॥ १ ॥
कर्म कीचड़ में फंसा निःशक्त हिल सकता नहीं।
बस इसी कारण प्रभू का दर्श मिल सकता नहीं।
आओ बेग कृपालो निकालो मुझे ॥ २ ॥
है सभी संसार स्वारथ का लऊं किस की शरण ॥
शान्ति दायक विश्व में केवल तुम्हारे ही चरण।
दुःखी जान हृदय से लगा लो मुझे ॥ ३ ॥
तुम पिता मैं पुत्र हूं तुम बिम्ब मैं प्रतिबिम्ब हूं।
ब्रह्म तुम मैं जीव सब विधि आप के अवलम्ब हूं।
इसी नाते से नाथ निभालो मुझे ॥ ४ ॥
जीत लूं मन इन्द्रियों को नाथ ऐसी शक्ति दो।
सर्व बाधा से रहित निष्काम अपनी भक्ति दो ॥
भिक्षा अपनी ही भक्ति की डालो मुझे ॥ ५ ॥

नीच नर पशु नारकी निर्गुण निकम्मा आलसी।
चित्त चुराता आप से है पाप में बुद्धि फंसी।
काल व्याल से नाथ छुड़ालो मुझे ॥ ६ ॥
दीन जन पापी प्रतापी मोह निशि से दो जगा।
भक्ति अपने चरण पंकज की मैं इस को लो लगा॥
अपना जान के जन अपनालो मुझे ॥ ७ ॥

५६

है ज्ञानियों के लब पर या रब कलाम तेरा।
और योगियों के दिल में बसता है नाम तेरा॥ टेक ॥
वेदों को जब विचारा हुवा भेद आशकारा।
बेखुद हुवा है पीकर उलफ़त का ज़ाम तेरा ॥ १ ॥
है लोक में भी तू ही परलोक में भी तू ही।
यह भी मकान तेरा वोह भी मुकाम तेरा ॥ २ ॥
जलचर भी तुमको जपते बनचर भी तुमको रटते।
और शाख गुल पै बुलबुल गाती है नामतेरा ॥ ३ ॥
खाली न जाऊं मैं भी हिस्सा मुझे भी पहुंचे।
है यह फैज़ाम तेरा और मैं गुलाम तेरा ॥ ४ ॥

६०

भाव के भूखे हैं भगवान ॥ टेक ॥
भाव न हो सच्चा जो उर में, तो सब व्यर्थ विधान ॥ १ ॥
भाव नहीं तो मनुज देह यह, जीवन मुक्त समान ॥ २ ॥
भाव शून्य आदर सब छूछा, छूछा है सम्मान ॥ ३ ॥

सत्य हृदय का शुद्ध भाव ही, जग में परम प्रधान ॥ ४ ॥
भाव होय तो ईश्वर दिखे, भाव बिना पाषाण ॥ ५ ॥

६१

गजानन लम्बोदर दातार ॥ टेक ॥

रमत भंवर गणपति गिरिजासुत, रिध सिद्ध के भर्तार ॥ १ ॥
बक्र तुण्ड शोभित कर सुन्दर, बाहन मूष सवार ॥ २ ॥
कनक छत्र शिर चवर ढुलावैं राजत भुजवर चार ॥ ३ ॥
हेमसुतापतिसुत गण नायक अन धन भरत भण्डार ॥ ४ ॥
सिन्दूर अक्षत पुष्प चढ़त अति, भोग मोदक विचार ॥ ५ ॥
युग कर वन्दित हर्ष करत हों दीजो भवसागर तार ॥ ६ ॥

६२

डगमग डोले दीनानाथ नैय्या भवसागर में मेरी ।
मैंने भर भर जीवन भार, छोड़े तन मोहत बहुवार ।
पहुंचा एक नहीं उस पार, यह भी काल चक्र ने घेरी ॥ १ ॥
टूटा मेरुदण्ड पतवार, पाते चहुं चले ना व्यार ।
मानी मन माझी ने हार, करसे दुर्गति रात अन्धेरी ॥ २ ॥
उमगे पुघ जग नजर भुजंग, कटके पटके पाप तरंग, ।
पड़कर पवन कर्म के संग, करती फिरती है चकफेरी ॥ ३ ॥
ठोकर मरणाचल से खाय, हट कर डूब जायगो हाय ।
शंकर अब तो पार लगाय, तेरी मार सही बहुतेरी ॥ ४ ॥

६३

श्रीराधेरानी दे डारो ना बंसरो मोरी ॥ टेक ॥
जिस बंशी में मोरे प्राण बसत हैं, सो बंशी गई चोरी ॥ १ ॥
सोने की नाहीं कान्हा रूपे की नाहीं हरे बांस की पोरी ॥ २ ॥
काहे से गाऊँ राधे काहे से बजाऊं, काहे से लाऊँ गैय्या घेरी ॥३॥
मुख से गावो प्यारे ताल से बजाओ, लकुटी से लावो गैय्या घेरी ।४
चन्द्रसखी भज बाल कृष्ण छवि, हरि चरणन की चेरी ॥ ५ ॥

६४

दिलवर पास बसदा ढूंढन किथे जावना ॥ टेक ॥
गली ते बजार ढूंढो, शहर ते दयार ढूंढो ।
घर घर हजार ढूंढो पता नहीं पावना ॥ १ ॥
मक्के ते मदीने जाइये, मत्थे चाहे मसीत घसाइये ।
ऊँची कूक बाग सुनाइये, मिल नहीं जावना ।. २ ॥
गंगा भावे जमना न्हावो, काशी ते प्रयाग जाओ ।
बद्री केदार जाओ, मुड़ घर आवना ॥ ३ ॥
देश ते दशोर ढूंढो, दिल्ली से पशोर ढूंढो ।
भावें ठौर ठौर ढूढो, किसे न बतावना ॥ ४ ॥
बनो जोगी ते वैरागी, सन्यासी जगत त्यागी ।
प्यारे सेंई न प्रीति लागी, भेष की बटावना ॥ ५ ॥
भावे गले माला डाल, चन्दन लगाओ भाल ।
प्रीति नहीं साँईं नाल, जगत मुंह दिखावना ॥ ६ ॥

मोमनादि शकल बनावें, काफ़ां दी कम्म कमावें।
मत्थे ते महराव लगावें, मौलवी कहावना ॥ ७ ॥

६५

मन ना रङ्गाये रङ्गाये जोगी कपरा ॥ टेक ॥
आसन मार मन्दिर में बैठे, नाम छांड पूजन लागे पथरा ॥ १ ॥
कनवा फड़ाय जोगी जटवा बढोले, दाढ़ी बढाय जोगी ह्वैगये बकरा ॥ २ ॥
जंगल में जाय जोगी धुनियां रमोले, काम जराय जोगी बन गये हिजरा ॥ ३ ॥
मथवा मुड़ाय जोगी कपड़ा रंगोले, गीता बाँच के जोगी ह्वैगये लबरा ॥ ५ ॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो, जम दरवजवा बांधन जाहरे पकरा ॥ ६ ॥

६६

राम जन मन रञ्जन राम, राम भव भय भंजन राम।
राम खल दल गंजन राम, सीताराम सीताराम ॥
दुष्ट निकन्दन आनन्द कन्दन, दशरथ नन्दन राम।
रघुकुल के पति राम, निर्बल के बलराम ॥
निर्धन के धन राम, सीताराम सीताराम।
वृथा की छोड़ के सब धूम धाम राम कहो।
विचरते सोते जागते तमाम राम कहो ॥
जो तुम को चाहिये आराम राम कहो।
मेरे तो इक राम, भजलेरे मन राम सीताराम सीताराम ॥

६७

वैराग योग कठिन उधो हम न करब हौ ॥ टेक ॥
कैसे छोड़ब ऐसा देश जटा मुकुट धरब वेश ।
अंग विभूति लाय जहर खाय मरब हौ ॥ १ ॥
कैसे तजब अंग चीर मृगछाल धरब शरीर ।
सुखद सेज छोड़ भुयां कैसे पड़ब हौ ॥ २ ॥
जमना जल अति गम्भीर तन मन नहीं धरत धीर ।
कृष्ण बिरह लागि वरु डूबी मरब हौ ॥ ३ ॥
एक तो दुबल गात दूजे लिखब बिरह पात ।
सूर श्याम दरश बिना प्राण तजब हौ ॥ ४ ॥

६८

छबि अपनी दिखाजा मुरारी हमें ॥ टेक ॥
यमुना के तट पर जाय के गो गो पिलाय के ।
मोहे थे तीनों लोक को बंशी बजाय के ॥
वही बंशी सुनाजा मुरारी हमें ॥ १ ॥
जाकर कदम्ब के पेड़ पर वस्त्र चुराय के ।
बैठे थे आसन मार कर मुखड़ा छिपाय के ॥
दीजे दर्शन मुरारी खरारी हमें ॥ २ ॥
बालक अवस्था बीच में माखन चुराय के ।
माता के हाथ जाय के ऊंखल बंधाय के ॥
वही सूरत दिखाजा बिहारी हमें ॥ ३ ॥
माटी जो खाई आपने ब्रज भूमि जाय के ।

चौदह भुवन त्रैलोक्य को मुख में दिखाय के ॥
दीजे भक्ति में प्रीति गिरधारी हमें ॥ ४ ॥
सुनिये हे आनन्दकन्द हो व्रजचन्द आनके।
रक्षा हमारी कीजिये बालक जो जानके ॥
दीजे भव सेती पार उतारी हमें ॥ ५ ॥

६९

शरण प्रभु की आवोरे यही समय है प्यारे ॥ टेक ॥
छल कपट और झूठ को त्यागो, सत्य में चित्त लाओ रे ॥
उदय हुआ ओं नाम का भानू, आओ दर्शन पावो रे ॥
पान करो इस अमृत फल को, उत्तम पदवी पावो रे ॥
हरि की भक्ति बिना नहीं मुक्ति, दृढ विश्वास जमावो रे ॥
मनुष्य जन्म अमोलक है यह, वृथा न इसे गंवाओ रे ॥
करलो नाम हरि का सुमरन, अन्त को ना पछताओ रे ॥
धन्य दया जो सब को देवे, पल मत तुम बिसराओ रे ॥
छोटे बड़े सब मिलकर खुशी से, गुण ईश्वर के गाओ रे ॥

७०

दयार्द्र हो दयालु दासता विनाश कीजिये।
मिटा प्रमाद शान्तिका विमल प्रकाश दीजिये ॥
त्रिमोह वश न हम कभी स्वदेश का अहित करें।
परोपकार के लिये प्रसन्न चित्त हो मरें ॥
यहां स्वतन्त्रतार्क की नवीन ज्योति जगमगे।
अनीति नाव न्याय सिन्धु में निराश्रय डगमगे ॥

सुवीर भूमि बीर भुमि फिर बने जहान में।
परार्तिहारिणी बने स्वदेश समुत्थान में॥
समष्टि प्रेम में सदा समोत प्रोत हम बहें।
बचें प्रपंच जाल से सुमार्ग पर डटे रहें।
न देश शत्रु भी बने स्वदेश में हमें कभी।
हो कष्ट भले ही हमें न कष्ट हो उसे कभी॥
जीवन परोपकारमय पवित्र प्रभो बनाइए।
कृपालु हो कृपा अबोध जनों पर दिखाइए॥
पथ में निराश्रयी बना न भूलना हमें प्रभो।
हम भूल जांय तदपि तुम हमें न भूलना प्रभो॥

७१

हे प्रभो! अशरण शरण सद्ज्ञान हमको दीजिये।
हम निर्बलों को दिव्य बल दे सबल सक्षम कीजिये॥
दीजिये वर हर समय हम देश सेवा रत रहें।
देश हित दुःख के प्रहारों को सुमन सम हम सहें॥
स्वार्थ में बीते न क्षण परमार्थ जीवन सारहो।
सोते सजग हर दशा में मन बिषय देशोद्धार हो॥
सेवा व्रती बनकर सभी तव भक्ति अधिकारी बनें।
ब्रह्मचारी सदाचारी बीर ब्रतधारी बनें॥
टल जांय अर्बुद विन्ध्य हिमगिरि पर न हम पीछे हटें।
कट जांय तिल २ मुदित हो सन्मार्ग पर नित हम डटें॥
यह है तभी सम्भव प्रभो जब तव कृपा की कोर हो।
हां विश्व रूप विराट के कर विश्व शासन डोर हो॥

तम पूर्ण दिशि घन गर्जना बर्षा व मण्डल से गिरें ।
भव जलधि में ले तरणि जर २ हे प्रभो ! हम चल पड़ें ।
आप के ही हाथ हमको पार प्रभो ! पहुंचाइए, ।
परम पितु सन्तान को स्वातन्त्र्य मार्ग दिखाइए ॥

७२

मैं श्याम को ढूँढन निकसी मुझे श्याम डगर बतलाओ ।
मैं श्याम के प्रेम की प्यासी मेरे प्रेम की प्यास मिटाओ ॥ टे ॥
मन भ्रमरा बन केलि कुँज बन में अलियन कलियन भटके ।
पीपी पपीहा प्यू प्यू करके श्याम २ नभ बोलेरे ॥ १ ॥
श्याम नाम कैसो मीठो है कानन में रस घोरे रे ।
अरे श्याम श्याम नाम बोले रे ॥ २ ॥

७३

सुन्दरि राधे आवे बनी, व्रज रमणी गण मुकुट मणी ॥ टेक ॥
कुंचित केशिनि निरुपम वेशिनि रसिया वेशिनि संगिनिरे ॥
अधर सुरंगिनि अंग तरंगिनि नव नव संगिनिरे । १ ॥
कुँजर गामिनि मोतिम दशनि दामिनि चमक निहारीनिरे ॥
अभरणि धारणी जग चित हारिणि श्यामरहृदय बिहारिनिरें ॥
नय अनुरागिनि अखिल सुहागिनि पंचम रागिनि सोहनि रे ॥
रास विलासिनि हास विकाशिनि गोविन्द दस चित मोहिनिरे ॥

भगवन् तुम्हीं बतादो किसकी शरण गहें हम।
तज कर जगत्पिता को किससे विथा कहें हम॥ टेक॥
भव सिन्धु है अपारा सूझे न वार पारा।
तेरे बिना सहारा मझधार में बहें हम॥ १॥
हा! जगत आह कल २ पछतायें हाथ मल मल।
अब कल पड़े न पल २ मन मार कर रहें हम॥ २॥
मानो नहीं सुनो हा! फिर सोचलो हृदय की।
ये धमकियां कहां तक कहदो भला सहें हम॥ ३॥

महात्माओं के वाक्य।

हे मेरे ईश्वर! मेरे जीवन के लबालब भरे पात्र से तू कौनसा दिव्य रस पान करना चाहता है।

त्याग मेरे लिये मुक्ति नहीं है मुझे तो आनन्द के सहस्त्रों बंधनों में मुक्ति का रस आता है।

आदमी जितना आप बिगाड़ करता है उतना दूसरे नहीं कर सकते। जो कुछ हम आप सीखते हैं उसका असर दूसरों की सीख से बढ़ कर है।

उपदेश और अच्छी सलाह जहां से मिले आदर के साथ स्वीकार करो। देखो मोती सा अनमोल पदार्थ सीप जैसी तुच्छ वस्तु से निकलता है। जो अच्छी सलाह नहीं सुनता वह धिक्कार सुनेगा।

अर्थ सिद्धि की दो कुंजियां हैं बुद्धि और आशा सँयुक्त उद्योग। बिना इनके आदमी संसार में बढ़ नहीं सकता।

किसी बात के निर्णय में जल्दी न करो पर जब समझ लिया तो दृढ़ संकल्प रहो करने के पूर्व उस काम की हानि लाभ भली भांति मन में तोल लो फिर उसको करो परिणाम चाहे जो हो।

किसी काम में हाथ डालने के पहले अपने पुरुषार्थ को तोल लो बहुत ऊंचे चढ़ जाने से गिर जाने का डर और बहुत नीचे पड़े रहने से कुचल जाने का भय होता है।

मालिक पर भरोसा करो पर ऊंट के पाँव बान्ध कर रक्खो।

जिसने किसी काम को पूरा करने का प्रण ठान लिया वह उसको अवश्य कर लेगा।

कर्ता सब पशु पक्षियों को आहार देता है परन्तु उन की मांद में नहीं डाल आता।

धन की मिठास उसको मिलेगी जिसने उसकी कमाई में महनत की कड़वाई को चक्खा है।

किसी कठिन काम के करने में हिम्मत हार देना कायरता का लक्षण है। यदि उसे दूसरे कर सकते हैं तो तुम क्यों नहीं कमर कस कर तयार हो जाते? कुछ मालिक पर भरोसा अवश्य रक्खो जो सब उद्योग की जान है उस पर दृढ़ विश्वास रख कर आदमी असम्भव काम कर सकता है। असम्भव का शब्द केवल मूर्खों के कोष में मिलता है।

स्वतन्त्र और अनाधीन वही कहा जा सकता है जो अपने काम के लिये दूसरे का आश्रित नहीं है।

एक से एक मिलकर ग्यारह होते हैं परन्तु अलग रहने से एक का एक ही बना रहता है। पर याद रक्खो 'एका' नाम अच्छे और नीति संयुक्त कामों के लिये मिलने का है। नीति विरुद्ध कामों के लिये मिलने का नाम "गुट्ट है।"

तैमूर लंग का कथन है कि यदि तुम प्रजा को आराम देना चाहते हो तो न्याय के खड्ग को आराम न लेने दो। न्याय में कोमलता मिली रहने से वह सोना और सुगन्ध होजाता है।

उमर भक्त ने किसी गुलाम से जो बकरी चराता था पूछा कि एक बकरी मेरे हाथ बेचेगा। उसने जवाब दिया कि बकरियों का मालिक दूसरा है मुझे तो इनके चराने का काम सुपुर्द है। इस पर उमर बोले कि इन का मालिक यहाँ तो नहीं देखता है उससे कह देना कि एक बकरी को भेड़िया उठा ले गया। तब चरवाहे ने उत्तर दिया कि जो बकरी का मालिक नहीं देखता तो घट घट व्यापी मालिक तो देखता है। यह सुन कर उमर रो पड़ा।

भलों का संग करो। कुसंग से बचो बड़ों की आज्ञा पालन करना मनुष्य का धर्म है। बड़ों से लड़ना अपना अपघात करना है। बड़ों की सीख संसार की कीच में न फंसने के लिये लाठी का काम देती है समझदार को चाहिये की सदा बड़े का संग करे।

जो कोई अपनी उन्नति या कीर्ति चाहता है तो उसको

इन अवगुणों से बचना चाहिये। अधिक सोना, औंघना, डर, क्रोध, आलस्य और टालमटोल।

राज भक्ति का भारी दर्जा धर्म शास्त्र और नीति दोनों में है। राजा या बादशाह के द्रोही का लोक परलोक दोनों बिगड़ता है।

घमण्ड या अहंकार मूर्खता का चिन्ह है।

जो दूसरे की निन्दा नहीं करता, जिसको अपनी प्रशंसा नहीं सुहाती दूसरे की प्रशंसा से हर्ष होता है, जो दूसरों को सुख पहुंचाता है, छोटों से कोमलता तथा दया भाव, से और आदर सत्कार के साथ वर्तता है तथा खेल में भी किसी के साथ जो चालाकी नहीं करता वह महापुरुष है।

यूनान का फीसागोरस पुनर्जन्म में दृढ़ विश्वास रखता था उसने कहा कि मैं पहले जन्म में फौज का अफसर था और लड़ाई में मारा गया। उसके पता देने से एक कन्दिरा में जहां लड़ाई हुई थी उसके हथियार पड़े हुए मिले। इसी तरह अपने बहुत से चेलों के पिछले जन्मों का हाल बताया और लोगों को प्रत्यक्ष प्रमाण से निश्चय करा दिया।

मौलाना रूम ने फरमाया है कि मैं कितने ही जन्म भोग चुका हूं।

बुद्ध का उपदेशः–नौकरी बुद्धिमान् की करो। मूर्ख से बचो। सज्जनों के परोस में रहो। भली कामनाओं को मन में बसाओ और बुरी कामनाओं को निकालो। शान्त स्वभाव रहो। जब कोई दोष लगावे तो अपने मनको न बिगाड़ो। सम्पत्ति

में फूल न जाओ और विपत्ति में पिचक न जाओ। दूसरे का माल बेईमानी से लेने या दबा बैठने की नियत न करो। जिनसे तुम्हारा जी नहीं मिलता उनसे दूर रहो। किसी को कथनी या करनी से धोखा न दो।

पक्के धर्मी की बोली धीमी होती है क्योंकि जो अच्छे काम की कठिनता को जानता है वह अवश्य सम्भल कर बोलेगा।

आदमी अपना दर्पण आप है। अपनी आँख आप खोलो नहीं तो कष्ट खोलेगा।

झूठी खबर न उड़ाओ। बुरे से मेल न करो। तुम्हारे शत्रु का विचरा हुवा बैल तुम्हें मिले तो उस के घर पहुंचादो परदेशी को न सताओ। जब खेत काटो तो थोडा सा बटोही के लिये भी छोड़ दो। अपने परोसी के साथ अत्याचार न करो। मजूर को मजूरी रात भर रोक न रक्खो। बहरे की ठठोली न उड़ाओ। अन्धे की राह में ठोकर खाने को ढेला न रक्खो। मुखबिरी न करो। चुगली न खाओ। अपने परोसी को बुरे काम करने से डाटो। किसी को छोटी निगाह से न देखो लग्न मुहूर्त का विचार मत करो।

बूढ़ों का खड़े होकर सत्कार और सब प्रकार प्रतिष्ठा करो। धरती को बेच न डालो।

प्रेम आकर्षण या खैंच शक्ति का नाम है जिस से यह सब रचना ठहरी हुई है और मालिक आप प्रेम स्वरूप हैं अपने से बढ कर किसी को चाहना प्रेम है। जो अपने से बढ़ कर

मालिक को चाहता है उसको तन मन धन अपने प्रीतम पर वार देने में क्या शोच विचार होगा।

प्यारे! अगर तू न बोलेगा तो मैं अपने हृदय को मौन से भर लूंगा, मैं चुप चाप पड़ा रहूंगा और तारों से भरी हुई रात्रि की तरह प्रतीक्षा करूंगा, तेरी वाणी की सुनहरी धाराएं आकाश को चीर कर नीचे की ओर बहेंगी।

लोग अपने विधि विधानों से मुझे जकड़ने के लिये आते हैं किन्तु मैं उन्हें टाल देता हूं क्योंकि मैं तो केवल प्रेम के कर कमलों में आत्म समर्पण करना चाहता हूं। मुझे आज नींद नहीं, रह २ कर मैं द्वार खोलता हूं और अन्धेरे में बाहर की ओर देखता हूं मैं विस्मित हूं कि तेरा रास्ता किधर है। दुःख रूपी दूत तेरे द्वार को खटखटा रहा है। उसका संदेश है कि तेरा स्वामी जगता है और रात्रि के अन्धकार में वह मुझे प्रेमाभिसार के लिये बुला रहा है। वह ऐसे समय आया जब रात्रि का सन्नाटा था। वह मेरे इतने नज़दीक आता है कि जिस की श्वास मेरे शरीर में लगती है।

मेरा छोटा हृदय उन के हाथों के अमृतमय स्पर्श से अपने आनन्द की सीमा को खो देता है और उस में ऐसे उद्गार उठते हैं कि जिनका वर्णन नहीं हो सकता।

संसारी जनों का प्रेम मुझे सब तरह से बान्धने का यत्न करता है और मेरी स्वतन्त्रता को छीन लेता है परन्तु तेरा प्रेम जो उनके प्रेम से बढ़कर है निराला है वह मुझे दासता की शृंखला में नहीं बांधता किन्तु मुझे स्वतंत्र रखता है।

तीन बात जितनी बढ़ाओगे बढ़ेंगी ।भूख नींद और डर।

तीन की महिमा तीन जानते हैं । जवानी की बूढ़े, आरोग्यता की रोगी और धन की निर्धन।

तीन बातों से बचो सब तुम्हें पसन्द करेंगे। किसी से कुछ न माँगो, किसी को बुरा मत कहो, और किसी के महमान के बिना बुलाए पुछलग्गू न हो।

तीन के बिना तीन नहीं रहते। धन बिना वाणिज्य के, विद्या विना शास्त्रार्थ के और राज्य बिना शासन के।

बूढों का आदर करना छोटों को सलाह देना, बुद्धिमानों से सलाह लेना, मूर्खों के साथ,न उलझना।

चार तरह के आदमी होते हैं-मक्खी चूस, कंजूस उदार और दाता। जो न आप खाय न दूसरे को दे वह मक्खी चूस, आप खाय पर दूसरे को न दे वह कंजूस, आप भी खाय और दूसरों को भी दे वह उदार और जो आप न खाय परन्तु दूसरों को दे वह दाता कहलाता है। यदि दाता नहीं बन सकते तो उदार तो अवश्य ही होना चाहिये।

संकट में मित्र की, रण में शूर की, ऋण में साहू की टोटे में स्त्री की और रोग शोक में नातेदारों की पहचान होती है।

खुशी, रंज, रोजी, मौत यह चार अपने आप आती हैं।

चार जाकर फिर नहीं आती, छूटा हुवा तीर, मुंह से निकली बात, बीती हुई उमर और टूटा हुवा दिल।

जो आके न जाय वह बुढापा देखा।
जो जाके न आय वह जवानी देखी॥

चार चीजें पहले निर्बल दीखती हैं और आगे जोर दिखलाती हैं। शत्रु, आग, रोग और ऋण।

पांच के संग से बचना चाहिये झूठा, मूर्ख कन्जूस, डरपोक और दुष्ट।

मैं आकारों के समुद्र में इस आशा से गहरी डुबकी मारता हूं कि निराकार का पूर्ण मोती मेरे हाथ आजाय।

मैं अपने जीवन भर अपने गीतों के द्वारा तुझे ढूंढता रहा हूं। अब मैं उत्सुक हूं कि मर कर अमरत्व में लीन हो जाऊं।

मैं तेरी कथाओं को अमर गीतों में प्रकट करता हूं और तेरा रहस्य मेरे हृदय से निकल पड़ता है।

मैं तुझे तेरी जीत की भेटों और अपनी हार के हारों से अलंकृत करूंगा।

जीवन रूपी नौका की पतवार को जोड़ते समय मैं जानता हूं कि अब तू इसे अपने हाथ में ले लेगा।

नीलाकाश से एक आंख मेरी ओर देखेगी और इशारे से चुपचाप मुझे अपनी ओर बुलाएगी।

जब मैं यहां से बिदा होऊं तब मेरे अन्तिम बचन यह हों, कि मैंने जो कुछ देखा है उससे बढ़ कर और कुछ नहीं हो सकता।

जब मां बच्चे को दाहने स्तन से छुड़ाती है तो वह

खींचता है और दूसरे क्षण में ही जब वह उसे बांया स्तन देती है तब उसे आश्वासन होता है।

मुझे उस समय की कोई खबर नहीं जब मैंने पहिले पहल इस जीवन में प्रवेश किया था।

जब प्रातःकाल मैंने आकाश को देखा तो मुझे उसी क्षण मालूम हुआ कि मैं इस जगत् में कोई अपरिचित जन नहीं हूं और उस नाम रूप रहित अज्ञेय शक्ति ने मेरी मां का रूप धारण कर मुझे अपनी गोद ले लिया है। हे मेरे मित्रो! अब मेरे जाने की बेला है। तुम सब मेरे लिए शुभ कामना करो। आकाश वहां से रक्त वर्ण हो रहा है और मेरा मार्ग सुहावना है। मैं अपनी यात्रा पर खाली हाथ और आशा पूर्ण हृदय के साथ जाता हूं।

मुझे छुट्टी मिल गई है। ऐ मेरे भाइयो! मुझे बिदा करो मैं तुम सब को प्रणाम करता हूं। मेरा बुलावा आया है और मैं यात्रा के लिए तयार हूं।

मैं जो कुछ हूं, मेरे पास जो कुछ है, मैं जो कुछ आशा करता हूं, और मेरा प्रेम यह सब गम्भीर रीति से सदा तेरी ओर प्रवाहित होते रहे हैं। मेरे ऊपर तेरे नयनों का अन्तिम कटाक्ष पड़ते ही मेरा जीवन सदा के लिए तेरा हो जायगा।

पुष्प पिरो लिए गए हैं, बरके लिए माला तयार है मृत्यु के पश्चात्, बधु भक्त अपने घर से विदा होगी और अपने स्वामी से शून्य रात्रि में अकेली मिलेगी।

जब मृत्यु मेरे द्वार को खटखटायेगी तब अपने प्यारे

अतिथि के आगे जीवन का भरपूर पात्र रख दूंगा। उसे खाली हाथ न जाने दूंगा।

प्रवीण शिल्पी अनेकों प्रतिमायें बनाते हैं। जब उनका समय आजाता है तब वे विस्मृति की पवित्र धारा में विसर्जन करदी जाती हैं।

बसन्त की मन्द २ वायु रह रह कर तेरे निर्जन भवन में उन फूलों के समाचार लाती है जो पूजा में तुझे नहीं चढ़ाये जाते।

मैं तेरे सन्ध्यागमन के सुनहरे शामयाने के नीचे खड़ा हूं। और अपने उत्सुक नयनों को तेरे मुखारविन्द की ओर उठाता हूं।

हाथ जोड़ कर अश्रु जल से मैं उसकी पूजा करूंगा और अपने हृदय के रत्न को उसके चरणों में अर्पण करूंगा।

हे प्रभु! तेरे हाथ में अनन्त समय है हमारे पास वृथा नाश करने के लिए तनिक भी समय नहीं है इस लिए हमें अपने अवसरों और सफलताओं के लिए छीना झपटी करनी चाहिए।

हम इतने दरिद्री हैं कि विलम्ब नहीं कर सकते। झगड़ा करने वालों के साथ झगड़ा करने में मेरा समय निकल जाता है। तेरी वेदी अन्त तक शून्य पड़ी रह जाती है। दिन समाप्त होने पर डरता हूं कि कहीं तेरा द्वार बन्द न हो जाय। पर ज्ञात होता है कि अभी समय बाकी है।

मेरे जीवन के प्रत्येक क्षण का नियन्ता तू है। सब के भीतर रह कर तू बीजों में अंकुर, कलियों में फूल और फूलों

में फल उत्पन्न करता है।

मनुष्य को चाहिये क्रोध को प्रेम से जीते, बुराई को भलाई से, लालची को उदारता से और झूठे को सत्य से।

यदि कोई आदमी मोटा और पेटू हो जाता है और सोने वाला व चारपाई पर लेटने वाला बन जाता है तो वह मूर्ख उस शूकर की भांति होता है जो मैले पर गुज़ारा करता है और बार बार जन्म लेता है।

बुढापे तक स्थिर रहने वाली भलाई सुखदाई है, दृढ़ता से पकड़ा हुआ विश्वास सुखप्रद है, ज्ञान का प्राप्त करना आनन्ददायक है और पापों से बचना सुखदाई है।

जो अन हुई बात को कहता है और जो हुई से इन्कार करता है वह दोनों नरकगामी हैं।

तृष्णा से प्रेरित हुए मनुष्य बेड़ियों और बन्धनों से जकड़े हुए पाश में फंसे हुए शशे की भान्ति चिर काल तक बार २ दुःख उठाते रहते हैं।

जिस का मन संयम में है उस ही में शक्ति, शान्ति, प्रेम और बुद्धि है।

उस ही ने सम्पूर्ण जगत् को जीता है जिसमें पूर्ण शान्ति है।

पण्डित, चिन्ता, भय, शोक, मोह, निराशा और घृणा इन सब से दूर रहता है।

बौद्ध-भिक्षुक

१. आँख का निग्रह करना उत्तम है नासिका का निग्रह उत्तम है, कानों का निग्रह अच्छा है, और जिह्वा का निग्रह उत्तम है।

२. शरीर का संयम अच्छा है, वाणी का संयम उत्तम है, विचारों का संयम उत्तम है इसी तरह प्रत्येक बात में संयम उत्तम है। जो भिक्षुक सब बातों में संयम कर लेता है वह सब दुःखों से छूट जाता है।

३. जो अपने हाथ को बस में रखता है, जो अपने पावों को वश में रखता है, जिसकी बाणी वश में है, जो अच्छी तरह वशवर्ती है, जो अन्तरात्मा में आनन्द मनाता है, जो संयमी है, जो एकान्तवासी और सन्तोषी है उसे भिक्षुक कहते हैं।

४. भिक्षुक जो अपने मुख को वश में रखता है। जो बुद्धि॰ मानी और शान्ति से भाषण करता है। जो अर्थ और आदेश की शिक्षा देता है। उसकी बाणी प्रिय है।

५–जो आदेश में निवास करता है, जो आदेश में आनन्द मनाता है, जो आदेश के अनुसार ध्यान करता है जो आदेश का अनुगामी है वह भिक्षुक सत्य आदेश से कभी नहीं गिरेगा।

६–जो कुछ मिल जावे उसे तुच्छ न समझे, कभी दूसरों से ईर्षा न करे जो भिक्षुक औरों से ईर्षा करता है उसे शान्ति नहीं मिलती।

७–उस भिक्षुक की (जो प्राप्त पदार्थ को तुच्छ नहीं समझता चाहे उसे बहुत कम मिला हो) देवता भी श्लाघा करते हैं, यदि उसका जीवन पवित्र है और वह आलसी नहीं है।

८. जो अपने को नाम व रूप से भिन्न समझता है वह मिथ्या पदार्थों के लिये शोक नहीं करता और वह निस्सन्देह भिक्षुक है।

९–वह भिक्षुक जो करुणा से काम करता है और बुद्ध के सिद्धान्त मानने में अचल है प्राकृतिक कामनाओं, और हर्ष से मुक्त हुवा शान्ति के स्थान (नर्वाण) को प्राप्त हो जावेगा।

१०–अय भिक्षुक! इस नौका को खाली करदे, खाली होने पर यह शीघ्र चलेगी, और राग व द्वेष को त्याग कर तू निर्वाण को प्राप्त हो जावेगा।

पाँच को छिन्न भिन्न करदे, पांच को छोड़दे, पांच से ऊपर होजा! ऐ भिक्षुक? जो इन पाँच बेड़ियों से बच निकला है वह ही पार गया है।

ऐ भिक्षुक! ध्यान कर और लापरवा मत बन। अपने विचार को ऐसे पदार्थ पर मत लगा जो तुझे सुख देता है, क्योंकि ऐसा न हो कि अपनी लापरवाई के कारण नर्क में तुझे अग्नि का गोला निगलना पड़े और उस अवसर पर जलते हुये तू चिल्ला कर कहे कि यह दुःख है।

विना ज्ञान के ध्यान नहीं और विना ध्यान के ज्ञान नहीं, वह जिस को ज्ञान व ध्यान दोनों हैं निर्वाण के निकट है।

वह भिक्षुक जिस का शरीर, बाणी और मन शान्त है, और चित्त एकाग्र है, और जिसने संसार के प्रलोभनों को छोड़ दिया है वह शान्त कहलाता है।

जो इच्छाओं के दास हैं वह कामनाओं के प्रवाह के साथ इस तरह नीचे चले जाते हैं जिस तरह मकड़ी अपने बनाए हुए जाले के साथ। बुद्धिमान् पुरुष अन्त में इसे काट कर संसार से विरक्त हो जाते हैं और मोह को छोड़कर चिन्ता

रहित हो जाते हैं ॥

जो सामने है उसे छोड़ दो जो पीछे है उसे छोड़ दो और जो मध्य में है उसे भी छोड़ दो।

बुद्धिमान् पुरुष उस बेड़ी को दृढ नहीं कहते जो लोहे, लकड़ी और सन की बनी हुई हो। उनसे कठिन पाश स्त्री और बाल बच्चों के लिए आभूषण और रत्नों की चिन्ता है।

मैंने सब जीत लिया है मैं सब कुछ जानता हूं मैं जीवन की प्रत्येक दशा में दुःख से मुक्त हूं मैं सर्व त्यागी हूं और तृष्णा का नाश करके स्वतंत्र हो गया हूं। स्वयं पढ़ कर मैं किसे पढ़ाऊं। हमारा अस्तित्व हमारे विचारों का फल है, यह हमारे विचारों पर अवलम्बित है, और हमारे विचारों से ही इसकी सृष्टि है। यदि मनुष्य दुष्ट विचार से भाषण करता है, या कर्म करता है तो दुःख उसका पीछा करता है जैसे कि चक्र गाड़ी में जुड़े हुए बैल के पांव का अनुगामी होता है। यदि मनुष्य शुद्ध विचार से भाषण करता है तो सुख उसका इस तरह अनुवर्ती होता है कि जिस तरह उसका छाया सदैव उसका साथ देता है,

जिस तरह वर्षा टूटे हुए छप्पर में घुस जाती है, उसी तरह मलीन हृदय में विषय प्रवेश कर जाते हैं।

जो हमारे जीवन जगत् का दाता है, वही हमारा पिता रक्षक भी है, वह महान् तेजस्वी एवं महान् शासक है।

अय परम प्यारे! तुम जो अपने भक्तों उपासकों को परम सुख एवं परम शान्ति का दान किया करते हो; यह

तुम्हारी अपनी ही सत्यता सत्य स्वरूपता है और तुम्हारी अपनी ही कृपा का परिणाम है।

वही लोग मुक्त हैं जिन्होंने अपनी इच्छाओं को जीत लिया है बाकी लोग देखने में स्वतंत्र मालूम होते हैं मगर वास्तव में वह बन्धन से जकड़े हुए हैं।

फिज़ूल खर्च करने वाले के पास जैसे धन नहीं ठहरता ठीक इसी तरह माँस खाने वाले के हृदय में दया नहीं रहती।

जिसे उचित अनुचित का विचार है, वही वास्तव में जीवित है पर, जो योग्य-अयोग्य का ख़याल नहीं रखता उसकी गिनती मुर्दों में की जायगी।

यदि किसी को अपने से प्रेम है तो उसको पाप की ओर ज़रा भी न झुकना चाहिए।

लालच द्वारा एकत्रित किए धन की कामना मत करो क्योंकि भोगने के समय उस का फल तीखा होगा।

झूठ और निन्दा के द्वारा जीवन व्यतीत करने से तो फ़ौरन ही मर जाना उत्तम है, क्योंकि इस तरह मर जाने से नेकी का फल मिलता है।

जो लोग अपने मित्रों के दोषों की खुल्ले आम चर्चा करते हैं, वह अपने दुश्मनों के दोषों को भला किस तरह छोड़ेंगे।

संसार-त्यागी पुरुषों से भी बढ़ कर सन्त वह है जो अपनी निन्दा करने वालों की कटुवाणी को सहन कर लेता है।

वेद भी अगर विस्मृत हो जाँय तो फिर याद कर लिए

जा सकते हैं, मगर सदाचार से यदि एक बार भी मनुष्य गिर जाय तो, सदा के लिए अपने स्थान से भ्रष्ट हो जाता है।

यदि कोई आदमी मूर्ख और अज्ञानी है तो केवल मौन व्रत धारण करने से मुनी नहीं हो जाता, बल्कि वह बुद्धिमान् आदमी जो भलाई और बुराई की तुलना करके भलाई को ग्रहण करता है मुनी है।

काम के समस्त बन को काट डालो, काम के बन से भय उपस्थित रहता है। जब तुम बन को और उसके छोटे पौदों को काट डालोगे तो तुम बन से छूट जाओगे और मुक्त हो जाओगे।

संसार को छोड़ कर तपस्वी हो जाना कठिन है, संसार को भोगना भी कठिन है, आश्रम का जीवन भी कठिन है, घर दुःखदाई है। बराबर वालों की साथ रहना भी दुःखप्रद है, दुःख सहित भ्रमण शील भिक्षुक ही सब से श्रेष्ठ है।

यदि मनुष्य परदोष-दृष्टि रखता है और स्वयं सदा अपराध करने की वृत्ति रखता है तो उसके विकार बढ़ेंगे और वह मनः विकारों के दमन करने से बहुत दूर है।

महान् पुरुष जो उपकार करते हैं, उस का बदला नहीं चाहते। भला संसार जल बरसाने वाले बादलों का बदला किस तरह चुका सकता है ?

योग्य पुरुष अपने हाथों से मेहनत करके जो धन जमा करते हैं, वह सब दूसरों ही के लिए होता है।

हार्दिक उपकार से बढ़कर न तो कोई चीज़ इस

संसार में ही मिल सकती है और न स्वर्ग में।

जिसे उचित अनुचित का विचार है, वही वास्तव में जीवित हैं पर, जो योग्य अयोग्य का ख्याल नहीं रखता उसकी गिनती मुर्दों में की जायगी।

लबालब भरे हुये गांव के तालाब को देखो जो मनुष्य सृष्टि से प्रेम करता है उसकी सम्पत्ति उसी तालाब के समान है।

दिलदार आदमी का वैभव गांव के बीचों बीच उगे हुए और फलों से लदे हुए वृक्ष के समान है।

गरीब को देना ही दान है, और सब तरह का देना उधार देने के समान है।

दान लेना बुरा है चाहे उससे स्वर्ग क्यों न मिलता हो। और दान देने वाले के लिए चाहे स्वर्ग का द्वार ही क्यों न बन्द हो जाय, फिर भी दान देना धर्म है।

हमारे पास नहीं है ऐसा कहे विना दान देने वाला पुरुष ही केवल कुलीन होता है

याचक के होठों पर सन्तोष जनित हंसी की रेखा देखे विना दानी का दिल खुश नहीं होता।

आत्मजयी की विजयों में से सर्व श्रेष्ठ जय है भूख को जय करना। मगर उस विजय से भी बढ़कर उस मनुष्य की जय है जो भूख को शान्त करता है।

मैं चुपचाप पड़ा रहूंगा और तारों से भरी और धीरता से अपना शिर झुकाये हुये रात्रि की भान्ति प्रतीक्षा करूंगा।

निःसन्देह प्रभात का आगमन होगा और अन्धकार का नाश होगा और तेरी वाणी की सुनहरी धारायें आकाश को चीर कर नीचे की ओर बहेंगी।

तब मेरे पक्षियों से प्रत्येक घोंसले से तेरे शब्द गीतों के रूप में उड़ेंगे और मेरी समस्त वन बाटिकाओं में तेरे सुर फूलों के रूप में खिल उठेंगे।

वही तो मेरा अन्तरात्मा है जो मेरे जीवात्मा को अपने गम्भीर अदृश्य स्पर्शों से जागृत करता है।

यह वही है जो इन नेत्रों पर अपना जादू करता है और मेरे हृदय रूपी वीणा के तन्तुओं पर सुख दुःख के विविध सुरों को आनन्द से बजाता है।

यह वही है जो इस माया के जाल को सुनहले और रूपहले हरे और नीले क्षणिक रंगो में बुनता है और उन जालों में से अपने चरणों को बाहर निकालने देता है जिनके स्पर्श मात्र से मैं अपने आपको भूल जाता हूं।

दिन आते हैं और युग के युग बीतते जाते हैं यह केवल वही है जो मेरे हृदय को नाना नामों नाना रूपों और हर्ष शोक के नाना उद्वेगों में घुमाता है।

त्याग मेरे लिये मुक्ति नहीं है। मुझे तो आनन्द के सहस्रों बन्धनों में मुक्ति का रस आता है।

तू मेरे लिये सदा नाना रंगों और गन्ध के अमृत की वर्षा किया करता है और मेरे इस मिट्टी के पात्र को लबालब भर देता है। मेरा संसार अपने सैंकड़ों दीपों को तेरी ज्योति

से प्रज्वलित करेगा और तेरे मन्दिर की वेदी पर उन्हें चढायेगा।

नहीं मैं अपनी इन्द्रियों के द्वार कभी बन्द न करूंगा। शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध का सुख तेरे परमानन्द को उत्पन्न करेगा।

हां, मेरे सब भ्रम और संशय तेरे आनन्द की ज्योति में भस्म हो जायेंगे, और मेरी सब वासनायें प्रेम रूपी फलों में परिणत हो जायंगी।

हे प्रभो! हम जीवों को कुछ दिया है वह हमारी सब आवश्यकताओं को पूरा करता है, और फिर तेरे पास ज्यों का त्यों लौट जाता है।

नदी अपना नित्य का काम करती है और खेतों बस्तियों में होकर वेग से बहती चली जाती है। तथापि उसकी निरन्तर धारा तेरे चरणों की ओर प्रक्षालन के लिये घूम जाती है।

फूल अपने सौरभ से वायु को सुगन्धित करते हैं तथापि उनकी अन्तिम सेवा यही है कि अपने को तेरे चरणों में अर्पण करें।

तेरी इस पूजा से संसार कुछ दरिद्री नहीं होता कवि के शब्दों का अर्थ लोग अपनीरुचि के अनुसार लगाते हैं किन्तु उनके वास्तविक अर्थ का लक्ष्य तू ही है।

हे मेरे जीवन स्वामी! क्या दिन प्रति दिन मैं तेरे सन्मुख खड़ा रहूंगा? हे भुवनेश्वर! क्या कर जोड़ कर मैं तेरे सन्मुख खड़ा रहूंगा?

क्या तेरे महान् आकाश के नीचे निर्जन नीरव अवस्था में नम्र हृदय से मैं तेरे सन्मुख खड़ा रहूंगा ?

क्या तेरे इस कर्म ग्रस्त संसार में जो परिश्रम और संग्राम के कोलाहल से आकुल है, दौड़ धूप में लगे हुये लोगों के बीच में रहते हुये मैं तेरे सन्मुख खड़ा रहूंगा ?

हे राजाधिराज ! जब इस संसार में मेरा कार्य समाप्त हो जायगा तो क्या मैं एकान्त और नीरव दशा में तेरे सन्मुख खड़ा रहूंगा ?

मैं तुझे अपना ईश्वर मानता हूं और इसलिये तुझ से दूर खड़ा रहता हूं मैं तुझे अपना नहीं समझता और इसलिये तेरे निकटतर आने का साहस नहीं करता। मैं तुझे अपना पिता मानता हूं और तेरे चरणों में प्रणाम करता हूं, किन्तु मैं तुझे अपना मित्र नहीं समझता और इसलिये तेरा हाथ नहीं पकड़ता।

जहां तू नीचे उतर कर आता है और अपने आपको मेरा बतलाता है वहाँ तुझे अपने हृदय से लगाने और अपना साथी मानने के लिये मैं खड़ा नहीं होता।

भाइयो ! मैं केवल तुम्हीं को अपना भाई समझता हूं। मैं उनकी पर्वाह नहीं करता मैं अपनी कमाई में उनको सम्मिलित नहीं करता और इस प्रकार तुझे भी अपने सर्वस्व में हिस्सा नहीं देता।

मैं सुख दुःख में उनका साथ नहीं देता और इस प्रकार तेरे पास भी नहीं खड़ा होता। मैं दूसरों के लिये अपना जीवन

देने से हिचकिचाता हूं और इस प्रकार जीवन महासागर में गोता नहीं लगाता।

जब जीव तुझे जान जाता है, तब उसके लिये कोई बेगाना नहीं रहता, तब उसके लिये सब द्वार खुल जाते हैं। हे प्रभु! मुझे यह वर दो कि मैं अनेकत्व के बीच में एकत्व के अनुभवानन्द से कभी वञ्चित न रहूं।

भजन

७५

सांवल पिया मोरी रंग दो चुनरिया ॥ टेक ॥
ऐसी रंग दो रंग नहिं छूटे, धोबिया धोवे चाहे सारी उमरिया ॥
जब दोगे तब लेके उठूंगी, बीत जाये चाहे सारी उमरिया ॥
या तो रंग दो या मोल मंगादो, प्रेम नगर में लगी है बजरिया ॥

७६

तुझे क्या खबर है मैं क्या देखता हूं।
मैं झुक २ के उसकी अदा देखता हूं ॥ टेक ॥
तू बुतखाने में मुझ को जाने दे जाहिद।
जरा ठैर अपना खुदा देखता हूं ॥ १ ॥

खिची दिल में तस्वीर उस सनम की।
मैं जब चाहूं गरदन झुका देखता हूं ॥ २ ॥
मक़ाबे में क्या बुतकेदे में भी जाहिर।
मैं उस को ही जलवेनुमा देखता हूं ॥ ३ ॥
झुकाता हूं मैं शौक़ से अपनी गरदन।
जो खंजर कमर से जुदा देखता हूं ॥ ४ ॥

७७

हमें तेरे दीदार की आरज़ू है।
शबोरोज दिल में यही जुस्तजू है ॥ टेक ॥
हमारी यह हस्ती है तेरा यह पर्दा।
अगर नेस्त यह है तो फिर तू ही तू है ॥ १ ॥
निकल जाय दम तेरे कदमों के नीचे।
यही दिल की हसरत यही आरज़ू है ॥ २ ॥
गुलिस्तां में जाकर हरेक गुल को देखा।
न तेरी सी रंगत न तेरी सी बू है ॥ ३ ॥
नहीं मुझको भाती हैं बातें किसी की।
सुनी जब से उस यार की गुफ्तगू है ॥ ४ ॥
समाया है नजरों में जब से तू मेरी।
जिधर देखता हूं उधर तू ही तू है ॥ ५ ॥
दिवाना समझ करके देते हो गाली।
ज़बां को सम्हालो यह क्या गुफ्तगू है ॥ ६ ॥
मिसरा–तू तो जिस ख़ाक को चाहे बने बन्दा ऐ पाक़।
मैं खुदा किसको बनाऊं जो ख़फा तू हो जाय ॥

मुझ में तू ऐसा समाजा कि मैं मैं न रहूं।
तुझ में मैं ऐसा समाऊं कि तू ही तू हो जाय॥
हरम औ दहर के झगड़े तेरे छुपने से पड़े।
तू अगर पर्दा उठाले तो तू ही तू हो जाय॥
यह है राज़ मरूफी न कहना तू आजिज़।
न यह है न वो है न मैं हूं न तू है॥७॥

७८

दूसरा कौन है जहां तू है, कौन जाने तुझे कहां तू है॥ टेक॥
तू ही खिल्वत में तू ही जल्वत में।
कहीं पर पिन्हां कहीं अयाँ तू है॥१॥
रंग तेरा चमन में बू तेरी गुल में।
खूब देखा तो बांगबाँ तू है॥२॥
जिस्म कहता है जान है तू ही।
जान कहती है जाने जां तू है॥३॥
नहीं तेरे सिवा यहां कोई।
मेजबां तू है मेहमा तू है॥४॥
महरमे राज तो बहोत हैं अमीर।
जिसको कहते हैं राजदाँ तू है॥५॥

७९

धुन रे धुनियां अपनी धुन धुन।
पराई धुनी का पाप न पुन धुन॥ टेक॥
तेरी रुई में चार बिनौले।
सब से पहले उनको चुन॥१॥

मिसरा–फ़क़र बकरे ने किया मेरे सिवा कोई नहीं।
मैं ही मैं हूं इस जहां में दूसरा कोई नहीं॥
जब न मैं मैं तरक की मगरूर के असबाब ने।
फेर दी जब जल के गरदन पै छुरी क़स्साब ने॥
गोश्त हड्डी और चमड़ा जाँ था जिस्मे जार में।
कुछ पका और कुछ पिसा कुछ लुट गया बाजार में॥
रह गई आँते फक़त मैं २ सुनाने के लिये।
ले गया नद्दाफ उन्हें धुन की बनाने के लिये॥
जर्ब से सोंटे के जिस दम तांत घबराने लगी।
मैं के बदले फिर तुही तू की सदा आने लगी॥

अच्छी तो तब धुन की जावे।
सगरी ताँत बजे तुन तुन ॥ २॥

सांस का तन के ताना बाना।
जामये वहदत तन पर बुन॥ ३॥

मिसरा–न ढूँढो हक़ को जमी पर न आस्मां ढूंढो।
खुदा को उसकी खुदाई के दरमियाँ ढूँढो॥
यहाँ ही होगा किसी गोशे में निहां होगा।
तलाश घर में करो अपना ही मकाँ ढूंढो॥
दिखाई देता है जो चांद साफ मतले पर।
तुम अपनी आँखें जरा खोलो दरमियां ढूंढो॥
तुम्हारे परदये दिल में है दिलरुवा मौजूद।
झुका के गर्दने तसलीम मेरी जां ढूँढो॥

तारे नफ्स को कस कर पहले।

अल्लाहू की बजा तुन तुन ॥ ४ ॥

८०

नाहिन रह्यो हिये में ठौर ॥

नन्दनन्दन अछत कैसे आनिये उर और ॥

चलत, चितवत, दिवस, जागत, स्वप्न, सोवत रात।

हृदय ते वह श्याम मूरति छिन न इत उत जात ॥

कहत कथा अनेक ऊधो लोक लाज दिखात।

कहा करौं तन प्रेम-पूरन घट न सिन्धु समात ॥

श्याम गात सरोज-आनन ललित गति मृदु हास।

सूर ऐसे रूप कारण मरत लोचन प्यास ॥

८१

दिल का दिल बातें बना कर ले गया।

वो तो माखन भी चुरा कर ले गया ॥ टेक ॥

कौन लड़ता था उसे माखन चुराने के लिये।

लड़का था आंखें लड़ा कर ले गया ॥ १ ॥

ढूंढते हैं उसको जंगल में हिरन।

होश तक नजरें मिला कर ले गया ॥ २ ॥

गोपियों को चैंकुलें पैदा हुई।

चीर गोपियों के चुरा कर ले गया ॥ ३ ॥

वो सफाई उसने की है दिल के साथ।

बातों २ में उड़ा कर ले गया ॥ ४ ॥

होश तक उसने न छोड़े ऐ नज़ीर।
ले गया मुरली बजा कर ले गया ॥ ५ ॥

८२

छबि दिखलादे कोई सांवरे मुरारी की।
बसी है दिलमें सूरत मोर मुकुटधारी की ॥ टेक ॥
केश पकड़ कर कंस को भी जा मारा।
सभा में लाज रखी द्रौपदी बिचारी की ॥ १ ॥
भूल सब बैठे हैं धर्म कर्म अपने को।
सुनादे आके कथा गीता पियारी की ॥ २ ॥
चराई गाय तुमने ग्वाल बने गोकुल के।
समझ न कोई सके लीला ये बिहारी की ॥ ३ ॥
प्रेम जैसे किया तुम से नासर ने।
हो गई दुश्मन ये ख़लक तेरे पुजारी की ॥ ४ ॥

८३

वुत में भी तेरा या रब जलवा नजर आता है।
वुतखाने के परदे में काबा नजर आता है ॥ टेक ॥
साकी के तसव्वुर में दिल साफ किया ऐसा।
जब सर को झुकाता हूं शीशा नजर आता है ॥ १ ॥
ऐ इश्क कहीं ले चल ये दयरो रहम छोड़े।
इन दोनों मकानों में झगड़ा नजर आता है ॥ २ ॥
जिस रोज़ से साकी का इक़जाम पीया है।
उस रोज से हर क़तरे दरिया नजर आता है ॥ ३ ॥

माशूक के रुतबे को महशर न कोई जाने।
अल्लाह भी मजनूं को लैला नजर आता है ॥ ४ ॥

८४

कलियर वालिया सांई निभाईं, दिल लालियां यारियां ॥ टेक ॥
डूंगी नदिया नाव पुरानी, हौं अनतारन तिरना न जानी।
बेड़े नूं पार लगाईं ॥ निभाईं दिल लालियां यारियां ॥ १ ॥
कन फड़ वाके मुद्रावे पइयां, घर २ अलख जगाईं ॥ २ ॥
पाट पटन तेरा सूबस बसियो, पाक जमाल विखांहि ॥ ३ ॥
गेरुवे कपड़े खुल्ले नूँ केश बे, इश्क नूँ दाग लगाईं ॥ ४ ॥

८५

प्रभू मैं शरणागत तेरी, निवारो शीघ्र विपति मेरी ॥ टेक ॥
अज्ञानी जानत नहीं धर्माऽधर्म विचार।
जो तोहे भावे धर्म है दूजा सभी असार ॥
नाथ काटो ममता बेरी ॥ १ ॥
निराश्रयों का आसरा निर्धारन आधार।
मेरा तुम बिन कोई नहीं ऐ मेरे सिर्जनहार ॥
करो भवपार नाव मेरी ॥ २ ॥
तू प्रभु अगम अपार है बेहद और बे थाह।
निराकार परमात्मा सब से बेपरवाह ॥
न जाने क्या मरजी तेरी ॥ ३ ॥
जो जो मैं हूं सो सो तू है दूजा और न कोय।
अहं आत्मा ब्रह्म हूं यह भाव समर्पूं तोय ॥
प्रगट हो अब न करो देरी ॥ ४ ॥

❀ ॐ ❀

पुस्तकों का सूची पत्र।

१ वेदोपनिषद्

ईश, केन, कठ और माण्डूक्य आदि उपनिषदों का उत्तम संग्रह है। अर्थ हिन्दी भाषा में दिया है सो भी अत्यन्त सरल। आत्मा की सच्ची शान्ति देने वाली इस अनमोल पुस्तक की न्यौछावर केवल ।=) मात्र

२ ज्ञानधर्मोपदेश

सागर गागर में भर दिया गया है। इस में वेद-वेदान्त की रहस्यमयी उत्तम कविताएं तथा लेख संग्रहीत हैं। मूल्य केवल =)।।।

३ श्रीमद्भगवद्गीता

मूल, अन्वय, पर्याय और सरल भाषा में अर्थ, यह सब क्रमशः इसमें हैं। गीता के परिचय देने की जरूरत ही क्या है। इतना अवश्य है कि इस टीका को किसी मत-मतान्तर के झगड़े में न डाल कर शुद्ध रखा गया है। कागज, छपाई सफाई बढ़िया, पृष्ठ-संख्या ४२६ फिर भी प्रचारार्थ न्यौछावर केवल ॥=)

४ भाषाभक्तिका प्रकाश

संस्कृत के वैय्याकरण जानते हैं कि भट्टोजिदीक्षित की 'सिद्धान्त कौमुदी' की फक्किकाएं कितनी गम्भीर अतएव क्लिष्ट तथा दुर्बोध हैं। संस्कृत व्याकरण को सुगम बनाने के लिए

इन्हीं फक्किकाओं को हिन्दी भाषा में, बड़े सुन्दर ढंग में, गुरु शिष्य के प्रश्नोत्तरों के रूप में समझाया गया है। संस्कृत के विद्यार्थियों और साधारणतः पण्डितों के बड़े काम की है। मूल्य केवल ॥)

५ अष्टोत्तरशतमंत्रमाला

यह गीता और उपनिषदों के चुने हुए १०८ उत्तम मन्त्रों की माला है। अर्थ हिन्दी में है। यह माला अवश्य संसार पार करने में सुदक्ष है। न्यौछावर -)।

६ सत्य शब्द संग्रह

वेदान्त की उत्तम सन्त वाणियों का सग्रह है। कवित्त, सवैया आदि सभी छन्द हैं। पुस्तक बड़ी सुन्दर है। मुमुक्षुओं को इसका नित्य मनन और पाठ करना चाहिये। भक्ति, ज्ञान और वैराग्य आदि एकत्र सन्निविष्ट हैं। मूल्य ।≡) मात्र

७ सार संग्रह

इसमें भी सार गर्भित, उपदेश पूर्ण, ज्ञान गुम्फित और भाव भरित कमनीय दिव्य कविताओं और सन्त वाणियों का सञ्चय है। संग्रह जैसा कुछ बन पड़ा है, सो इसके नाम से ही देखलो, सब का सार है। संग्रह कर्तृ श्रीमती सूरजदेवी जी हैं। इसका यह चौथा संस्करण है। इसमें पहले से बहुत कुछ बढा दिया है। प्रथम प्रार्थना, सद्गुरु का उपदेश, गोविन्दाष्टक, गुरोरष्टक् गुरु भक्ति के दोहे एवं चौपाई तथा ज्ञान, वैराग्य, सत्संग, आचार सम्बन्धि दोहे और भक्ति भाव पूर्ण, ज्ञानमय

सवैये, कवित्तादि हैं, मध्य में अनुभवी महात्माओं की वाणी अर्थात् भजनों का अत्युत्तम संग्रह है। अन्त में महात्माओं के वाक्य हैं तथा कुछ भजन हैं। इस पुस्तक में ८५ भजन तथा सैंकड़ों दोहे चौपाई, कवितादि होने पर भी भेट प्रचारार्थ मात्र ।)

८ शब्द सदाचार संग्रह

इसमें सन्त महात्माओं की उत्तम वाणियों का संग्रह है। अन्त में सदाचार सम्बन्धी उपदेश एवं १२४ नियम ऐसे हैं जो प्राणी मात्र के लिये परम हितकारी हैं। मूल्य -)।

९ भक्ति ज्ञान योग संग्रह

पुस्तक का विषय पुस्तक के नाम से ही स्पष्ट है। इसमें पाँचों देवताओं की स्तुति है, पश्चात् भक्ति, ज्ञान और योग की भली प्रकार से मीमाँसा की गई है अन्त में ब्रह्म चिन्तन है। मूल्य केवल =॥)

१० भगवत् गीता दशम अध्याय पर्यन्त

इसमें मोटे अक्षरों में मूल, पश्चात् सरल अन्वय और फिर सरल भाषा में गीता का शब्दार्थ है मूल्य ।-)

११ श्रीमद्भगवद्गीता

यह गीता पाठ मात्र मोटे टाइप में श्री गीता जी के दैनिक पाठकों के लिये एक भक्त ने छपवाई है। जो गीता के नित्य पाठ करने वाले हैं उनको यह मंगानी चाहिये। डाक खर्च के लिये टिकट भेजने चाहियें। इस का मूल्य भी 'नित्यपाठ' है।

१२ शब्द संग्रह

इसमें सन्तों की उत्तम वाणियों का संग्रह है। पुस्तक संग्रह करने योग है मूल्य ~॥)

१३ भक्ति चिन्तामणि

यह पुस्तक प्रत्येक मनुष्य के लिये परमोप योगी है। इसमें भगवान् के भक्तों की आदर्श जीवनी संग्रहीत है। इस के लेखक श्री पूज्य स्वामी भोले बाबा जी हैं। आपने इस को ऐसी उत्तम शैली से लिखा है कि पाठकों के आनन्द का पार नहीं रहता। यह प्रथम भाग ही है। इसको पढ़ने से ही इस का मूल्य समझा जा सकता है केवल कागजी मूल्य तो ।ड़) निर्धारित किया है।

१४ मनुस्मृतिसार

इसमें मनुस्मृति के बारह अध्यायों में से तत्व निचोड़ कर छाप दिया है जो कि प्रत्येक आदमी के लिये आवश्यक है जो इस पुस्तक के पढ़ने पर मनुस्मृति का सारा ज्ञान आसकता है। समास रूप से यह उपयोगी भाग बड़ा उत्तम छाया गया है। कागज़ बढिया सुन्दर छपाई पृष्ठ संख्या १०८ होने पर भी न्योछावर मात्र ।ड़)।

१५ भक्ति का भगवद्भक्तांक

यह भकि के तीसरे वर्ष का विशेषांक है। वास्तव में संग्रह करने योग्य है। इसमें देश के धुरन्धर विद्वानों सन्त महात्माओं के सुन्दर लेख हैं, भागवतों के ललित भाषा में

चरित्र हैं तथा कई तिरंगे और सादा चित्रों से सुसज्जित है। छपाई, सफाई तथा कागज अत्युत्तम लगाया गया है। यह उपहार देने योग्य अत्युत्तम पुस्तक है। मूल्य केवल ॥≈)

१६ भक्ति का भगवदंक

यह भक्ति के चौथे वर्ष का प्रवेशांक है। यह भी अपूर्व संग्राह्य पुस्तक है। इसके पढ़ने से ज्ञान का ज्ञान, सत्संग का सत्संग, भगवत् के गुणों का स्मरण तथा उनके दशों अवतारों तथा प्रधान २ भागवतों के सुन्दर चित्रों के दर्शन होते हैं। छपाई बहुत सुन्दर हुई है तथा ६ तिरंगे और सात सादे सुन्दर चित्रों से युक्त है। पृष्ठ संख्या १२८, तिस पर भी मूल्य केवल ॥।) बारह आना मात्र।

१७ गवांक

यह पाचवें वर्ष का विशेषांक है। इसमें गोरक्षा सम्बन्धी अति उत्तम संग्राह्य साहित्य संग्रह किया गया है। यह अङ्क गोशालाओं और डेयरी फार्मों के अतिरिक्त प्रत्येक गोरक्षक के पढ़ने और मनन करने योग्य है। उत्तम वंश की गौवों और सांडों के चित्र तथा कई एक रंगीन चित्रों से सुसज्जित इस अंक का मूल्य केवल १।) मात्र है।

१८ महात्मांक

यह भक्ति के छठे वर्ष का विशेषांक है। इस अंक में देश विदेश के महात्माओं का जीवन चरित्र बहुत ही ललित भाषा में संग्रह किया है। महात्माओं के २६ के लगभग रंगीन और सादे चित्र दिये गये हैं। मूल्य १)

पुस्तक मिलने का पता:-

मैनेजर 'प्रकाशन विभाग' श्रीभगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी।

मुद्रकः-भूमानन्द ब्रह्मचारी भक्ति प्रेस श्रीभगवद्भक्ति आश्रम रेवाड़ी,
प्रकाशकः-श्रीभगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा रेवाड़ी ।